श्री अरिहंतज्ञान ग्रन्थमाला, पुष्पांक - 6

जीवन सजाएं

लघुकथाकार

युगद्रष्टा आचार्य-प्रवर श्री ज्ञानचन्द्रजी म.सा.

प्रकाशक :

श्री अरिहंतमार्गी जैन महासंघ

1-9/1767-भागीरथ पैलेस, चादनी चौक, दिल्ली-6

फोन : 011-23865493 फैक्स : 011-23864383

❑ जीवन सजाएं

❑ युगद्रष्टा आचार्य-प्रवर श्री ज्ञानचन्द्रजी म.सा.

❑ प्रकाशक : श्री अरिहंतमार्गी जैन महासंघ, दिल्ली

❑ अर्थ सहयोगी : श्री किशोर-आशाजी मेहता, जयपुर

❑ प्रथम संस्करण : प्रतियाँ 1100

द्वितीय संस्करण : जून [redacted], प्रतियाँ 1100

❑ मूल्य : 25/-

❑ प्राप्ति स्थान :

1. श्री अरिहंत ज्ञान भण्डार
द्वारा–ज्योति मैचिग सेन्टर, खजांची मार्केट, ब्यावर–305901 (राज)
फोन 01462-326741, 9414363441(M)

2 श्री दिनेशजी जैन
1296, कटरा धुलिया, चांदनी चौक
दिल्ली–110 006 फोन 011-23919370

3 श्री दीपसिंहजी वैद
बेदो की पिरोल, बीकानेर–5 (राज) फोन 0151–2544403

4 श्री जयचन्दलालजी सुखाणी
डागो की पिरोल के पास, बीकानेर–5 (राज)
फोन · 0151-2524298, 2542188, 3290905, 9829890079 (M)

5 श्री सुनिल गंभीरमलजी श्रीश्रीमाल,
श्रीश्रीमाल भवन, लक्ष्मणदास नगर, दाढीवाला बगला, फ्लेट न 34
जिला–पेठ, जलगॉव–425001 फोन 0257-2222870, 9423490181 (M)

6 श्री अनूपचन्दजी सेठिया
द्वारा 4 होची मिनेह सारीनी
फ्लैट नं 4 सी, चौथा माला, पोस्ट– कोलकाता– 700071
Fax No 913322827405/7408 9331836635 (M)

❑ मुद्रक तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, बीकानेर
फोन 9314962475 (M)

प्रकाशकीय

अरिहत देव प्रभु महावीर के अनुसार उनका धर्मसघ 21 हजार वर्ष तक चलेगा। उसमे अभी तक 2½ हजार से कुछ अधिक वर्ष ही बीते हैं। अभी करीब 18½ हजार वर्ष बाकी हैं। इतने समय तक शुद्ध साधु–साध्वी, श्रावक–श्राविकाओ का इस भूमण्डल पर विचरण रहेगा। चतुर्विध सघ की विकास यात्रा अरिहतो की वाणी के अनुसार गतिमान रहे, यही हमारा लक्ष्य है।

सम्यक् दृष्टि के आठ आचारो मे धर्म प्रभावना नामक आठवा आचार है, जिसका तात्पर्य है कि ऐसे कार्य किये जाए जिनसे धर्म की प्रभावना हो। अन्य जन भी जिन–धर्म के प्रति आकर्षित हो। आगमकालीन युग मे कई राजाओ का वर्णन आता है। वे चतुरगिणी विशाल सेना सजाकर भगवान् के दर्शनार्थ गए थे। सेना सजाकर ले जाने मे धर्म–प्रभावना का भी एक लक्ष्य जुडा हुआ था। साधु–साध्वीगण अपनी मर्यादा को सुरक्षित रखते हुए धर्म की प्रभावना करते हैं। श्रावक–श्राविका भी अपनी मर्यादा मे रहते हुए धर्म–प्रभावना करते हैं। जिस कार्य मे अल्पहिसा व महान लाभ हो, उसे श्रावक वर्ग कर लिया करते हैं। जैसे पानी की प्याऊ लगाना, स्थानक बनाना आदि।

इसी कडी मे सत्साहित्य का प्रकाशन भी धर्म–प्रभावना के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण विधा है जिसके पढने से भव्यात्माओ को सम्यक् बोध प्राप्त हो सकता है और वे सही मार्ग मे आगे बढ सकती है। इस बात को ध्यान मे रखते हुए श्री अरिहतमार्गी जैन महासघ ने सत्साहित्य के प्रकाशन का महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया है।

युगद्रष्टा आचार्यप्रवर श्री ज्ञानचन्द्रजी म सा बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी है, जिन्होने मात्र 13 वर्ष की आयु मे समता विभूति आचार्यश्री नानेश के सान्निध्य मे जैन भागवती दीक्षा अगीकार की थी। आपने अपनी कुशाग्र प्रतिभा के आधार पर मात्र 18 वर्ष की आयु मे धार्मिक परीक्षा बोर्ड, बीकानेर की सभी परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण कर लीं। इतने कम समय में परीक्षा पास करने वाले, हजारो विद्यार्थियो मे, आप एक विद्यार्थी थे। आप ओजस्वी, मर्मस्पर्शी व हृदयग्राही प्रवचन करते हैं। आप जो भी अभियान चलाते हैं, वह सफलता के साथ सम्पन्न होता है। जो भी मुँह से बोल दिया है, वह अवश्य पूरा होता है। आपके उपदेश, प्रेरणा से

हजारो स्त्री–पुरुष धर्म के मार्ग पर चल रहे हैं। जो भी एक बार आपके सम्पर्क मे आ गया, उसके दिल–दिमाग मे आप के व्यक्तित्व की अमिट छाप लग जाती है। आपने अपने गुरु की उनकी जीवन सध्या मे सर्वतोभावेन समर्पणा के साथ सेवा करके सेवा–समर्पणा के क्षेत्र मे एक बेमिसाल आदर्श उपस्थित किया है, जिन्होने आचार्यश्री नानेश को कभी हाथ से सहारा देकर तो कभी कधो से सहारा देकर चलाया है, जिनकी आहार–विहार–निहार आदि सारी क्रियाए पूर्ण सेवा भाव से सम्पन्न करते रहे है। स्वयं आचार्यश्री नानेश, एक बार नहीं, पचासो बार फरमाया करते थे, कि 'श्री ज्ञानमुनिजी तो मेरे प्राण हैं, मेरे सर्वेसर्वा हैं। एक माता अपने पुत्र की जितनी सेवा न करे उससे अधिक यह मेरी कर रहा है। यह जो कहते है वो मैं कहता हूँ। यह तो मेरे साथ छाया की तरह जुडे हुए हैं। इनका महत्त्व मेरे हृदय मे है।' आदि कई अभिव्यक्तियाँ उनकी हो चुकी हैं। आचार्य श्री नानेश को जीवन की संध्या मे संथारा करवाकर एक शिष्य के सर्वोत्कृष्ट गुरुतर दायित्व को आपने निभाया है।

अत. ऐसे शिष्य की सेवा–उपासना करना स्पष्ट रूप से आचार्य श्री नानेश की सेवा करना है। जो आचार्य श्री नानेश का वफादार अनुयायी है, वीतरागदेव की आज्ञा पर चलने की भावना रखता है। उसे तो ऐसे महायोगी श्री ज्ञानचन्द्रजी म सा की सेवा करके अपने–आप के जीवन को सफल बनाना है।

ऐसे आचार्यप्रवर के द्वारा रचित साहित्य निश्चित ही प्रेरणास्पद हैं। ऐसी हमारी दृढ अवधारणा है। वैसे भी महामुनिराज के अब तक प्रकाशित साहित्य से हजारो भाई–बहिनो ने लाभ उठाया है। सघ का दर्पण सत्साहित्य ही होता है। जिससे संघ की छवि उज्ज्वल बनती है। अत. हमारा महासघ पूज्यश्री के अब तक प्रकाशित साहित्य एव अप्रकाशित साहित्य को यथाशीघ्र मुद्रित करने जा रहा है।

इसी कडी मे **"जीवन सजाएं"** प्रस्तुत पुस्तक मे लघु कथाएँ है। इसके प्रकाशन मे दानवीर, कर्मठ, व्यक्तित्व **श्री किशोर- आशाजी मेहता**, जयपुर का अर्थ सौजन्य प्राप्त हुआ है। तदर्थ महासंघ आभारी है, जिनका परिचय अलग से प्रकाशित है। आशा है भविष्य मे भी ऐसा ही सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रबन्ध सम्पादन में कर्मठ व्यक्तित्व श्रीमान् दीपसिहजी वैद एवं श्री पूनमचंदजी सुराणा का सहयोग प्राप्त हुआ। उसके लिए महासंघ आभारी है।

भवदीय

अनूपचन्द सेठिया	प्रवीण जैन	मुन्नीलाल जैन	जयचन्दलाल सुखाणी
अध्यक्ष	महामंत्री	अध्यक्ष	मत्री

श्री अरिहंतमार्गी जैन महासघ, दिल्ली

श्री अरिहतमार्गी जैन साहित्य समिति दिल्ली

अर्थ सहयोगी



एक भव्य व्यक्तित्व

श्री किशोर-आशाजी मेहता



"गुरु कीजे जान के, पानी पीजे छान के" वाली कहावत श्री किशोरजी मेहता पर सार्थक नजर आती है। आपने अपनी विवेक-प्रज्ञा से गुरु के महात्म्य को समझकर समता-विभूति, परम-योगी आचार्यश्री नानेश को गुरु के रूप मे स्वीकार किया था। उसके बाद आप उन्हीं के सुशिष्य युगद्रष्टा आचार्यप्रवर परमश्रद्धेय श्री ज्ञानचन्द्रजी म सा के निर्देशो पर चलकर आध्यात्मिक जीवन को आगे बढा रहे हैं।

श्री किशोरजी मेहता ने बी ई (Mechanical) इजीनियरिंग एव एम एस (Manufacturing System U S.A) करके अपनी प्रखर-प्रतिभा का परिचय दिया। इसके साथ ही व्यापारिक क्षेत्र मे भी आपने अपनी अच्छी सूझबूझ का परिचय दिया है। जयपुर मे भी आपकी अबोक स्प्रिंग्स के नाम से एक बहुत बडी इंडस्ट्री है। मुम्बई मे सॉफ्टकॉम एव इक्म्यूनिटी के नाम से सॉफ्टवेयर का व्यवसाय है। आपका व्यवसाय मुख्य रूप से मुम्बई, जयपुर एव अमेरिका मे है।

आप अकेले ही सारे व्यवसाय का अच्छे से संचालन कर रहे हैं। छोटी उम्र में ही आपने जीवन मे कडवे-मीठे सत्य का अनुभव करके उम्र से भी अधिक अनुभव प्राप्त किया हैं। देश-विदेशो मे भ्रमण करके भी आप पूरी तरह व्यसन-मुक्त रहकर सात्त्विक जीवन जी रहे है। हमे आप पर नाज है। सफल व्यवसायी के साथ ही आपकी धर्म-भावना भी प्रबल है। प्रतिदिन एक सामायिक तो आप करते ही है, साथ ही नवकारसी, पोरसी आदि छोटे-मोटे नियम भी आपके जीवन के अग हैं। दीपावली एव पर्युषण मे आप आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे रहकर धार्मिक आराधना करते हैं।

आपकी धर्मपत्नी श्रीमती आशाजी मेहता भी धर्म के प्रति प्रगाढ आस्थावादी सुसस्कारी कर्मठ महिलारत्न हैं। आप मुम्बई मे अपनी कम्पनी इक्म्यूनिटी (K P.O.) का सचालन भी कर रही है तथा साथ ही अपने पतिदेव को धार्मिक पथ पर आगे बढाने मे भी आपका महत्त्वपूर्ण योगदान है। आपके दोनो पुत्र, भविक और ओजस भी माता-पिता के अनुसार ही धार्मिक एव होनहार बालरत्न हैं।

श्री किशोरजी के पिताश्री देवराजजी मेहता एक दानवीर, सरलमना, प्रबुद्धजीवी व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हीं की दानवीरता आपमे आनुवंशिक रूप से आई है। शास्त्र एवं धार्मिक पुस्तको के स्वाध्याय मे आपकी विशेष रुचि है। जब भी समय मिलता है तब या समय निकाल करके भी सत्साहित्य का अध्ययन करते रहते हैं। आपकी धारणा है कि जिस प्रकार शरीर के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता है इसी प्रकार से जीवन को सही ढंग से जीने के लिए सत्साहित्य के स्वाध्याय की अनिवार्य आवश्यकता है। आप वर्तमान मे अरिहत युवा सघ के अध्यक्ष पद को सुशोभित कर रहे है। आप दोनो पति–पत्नी महासघ के मूल सरक्षक है।

इसी कडी मे परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री ज्ञानचन्द्रजी म सा के द्वारा व्याख्यायित शास्त्रो के प्रकाशन मे सम्पूर्ण सहयोग की स्वीकृति महासघ को आपने प्रदान की है। इसी के साथ ही प्रवचन, गद्य-पद्य, उपन्यास आदि जन-कल्याणकारी साहित्य में भी आप सहर्ष सहयोग प्रदान कर रहे हैं।

आप स्वभाव से सौम्य, विचारों से तेजस्वी, स्वधर्मियो के प्रति उदार, धर्म में निष्ठावान, आचरण में सदाचारी है। सुसाधुओं के प्रति श्रद्धाभाव, व्यापार में दक्षता, नैतिकता-प्रमाणिकता, सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार में विशिष्ट-रुचि आदि ऐसे विशिष्ट गुण हैं जो आपकी एक अलग ही पहचान बनाते हैं। आपकी उदारता का परिचय तो एक ही बात से लग जाता है कि आचार्यप्रवर के द्वारा रचित साहित्य एव शास्त्रो के प्रकाशन का सम्पूर्ण सहयोग देने की तत्परता दर्शायी है। धन्य है आपकी उदारता !

आपकी यह उदारता सभी के लिए प्रेरणाप्रद है। प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन भी आपका अर्थ–सहयोग प्राप्त हुआ है। आपके इस सहयोग के प्रति महासघ आभारी है। इसी प्रकार से समय-समय पर आपका सहयोग मिलता , यही अपेक्षा है। आपसे महासघ को बहुत आशाएँ हैं।

– जयचन्दलाल सुखाणी
संरक्षक
श्री अरिहंतमार्गी जेन महासंघ, दिल्ली

युगद्रष्टा आचार्यप्रवर
श्री ज्ञानचन्द्रजी म. सा.

(दुर्लभ व्यक्तित्व · सहज उपलब्ध)

जन्म	:	सवत् 2017, आसोज सुदी बारस, 2 अक्टूबर, 1960 रविवार को ब्यावर (राजस्थान) मे
पिता	:	सुश्रावक श्रेष्ठीवर्य श्री मागीलालजी सा मेहता
माता	:	सुश्राविका वीरमाता श्रीमती सौरभकवरजी मेहता
वंश	:	ओसवाल
दीक्षा	:	सवत् 2031, ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी, तदनुसार 26 मई, 1974, रविवार को गोगेलाव, नागौर (राजस्थान) मे
सहदीक्षार्थिनी	:	ज्येष्ठ भगिनी महासती श्री ललिताश्रीजी म सा
दीक्षागुरु	:	समता विभूति आचार्यश्री नानेश
परीक्षा	:	जैन सिद्धान्त रत्नाकर, आचार्य परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण
भाषा-ज्ञान	:	सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती, पजाबी, मराठी, आदि भाषाओ का ज्ञान
अध्ययन	:	जैन, बौद्ध आदि छ दर्शन, गीता, पुराण, न्याय, व्याकरण, जैनागम, कर्म–सिद्धान्त आदि दर्शनशास्त्र व आधुनिक विज्ञान के गभीर अध्येता, अध्यापन मे अद्भुत कौशल
प्रभावी प्रवास	:	राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, सौराष्ट्र, दिल्ली, हरियाणा, पजाब, उत्तरप्रदेश, जम्मू–कश्मीर आदि मे सघन प्रवास।
उपाधियों से ऊपर	:	स्थविरप्रमुख, सत प्रवर आदि अनेक उपाधियों को ससम्मान छोड दिया।
अद्भुत सृजनशैली	:	आगम, गद्य, पद्य, कविता, मुक्तक, गीत, इतिहास, उपन्यास, कहानी, संस्कृत, प्राकृत आदि अनेक विषयो एव भाषाओ मे पचासो पुस्तको का प्रणयन।
विशेषता	:	शास्त्रो की तर्कसगत हृदयग्राही व्याख्या, एकलव्य व कर्ण की भाति गुरुसेवा, प्रवचनो का गहरा प्रभाव, घर मे शान्ति, व्यसन–मुक्ति, भव्य जागरण, युवाओ के आकर्षण केन्द्र, णमोत्थुण एव भक्तामर स्तोत्र पर अभिनव व्याख्या,

प्रतिपूर्ण पौषध का महाभियान। प्रतिमास एक तेला।

व्यक्तित्व में चुम्बकीय आकर्षण . जो आया आपके सपर्क मे, वह आपका हो गया। प्रकाण्ड विद्वत्ता मे महान् ऋजुता, स्वाभाविक सरलता, सयम मे सजगता, विचारो मे विराटता, कार्य मे कुशलता, देशना मे दक्षता, जीवन मे जागरूकता आदि कई विशेषताए।

गुरु-कृपा गुरु ने शिष्य के लिए कहा कि 'श्री ज्ञानमुनिजी मेरा प्राण है। मेरी छाया है, मेरे लिए सर्वेसर्वा है। इनका मुझको, चतुर्विध संघ को एव युवाचार्यश्री को दिया गया सहयोग विलक्षण है' इन्हे आचार्यश्री नानेश महामुनिराज, स्थविर प्रमुख, मेरे प्राण आदि अनेकानेक विशेषणो से पुकारते थे। धन्य है ऐसे सुशिष्य को, जो गुरु के दिल मे बस गये।

संयमीय जागृति का महाअभियान : भगवान् महावीर सघ स्थापना दिवस वैशाख सुदी ग्यारस, विक्रम संवत 2061 तदनुसार 1 मई, 2004, शनिवार, मादीपुर, दिल्ली के दिन संघनायक, महामुनिराज ने सयमीय जागृति का महाभियान चलाया।

महाभियान की घोषणा : 2 मई, 2004, रविवार, अरिहंत नगर, दिल्ली।

आचार्य पद : 30 अप्रैल 2006, रविवार वैशाख, सुदी 3, सवत 2063 अरिहंत नगर, दिल्ली

उद्घोष . गुरु ज्ञान का है संदेश, ना हो घर में कभी क्लेश।
ज्ञान गुरु का है आह्वान, पौषध से होगा कल्याण।
ज्ञान गुरु का है संधान, णमोत्थुणं से हो उत्थान।

ऐसे पूज्य गुरुदेव आचार्यप्रवर की
आध्यात्मिक संयमीय विकासयात्रा के प्रति शुभकामना।
निवेदक : श्री अरिहंतमार्गी जैन महासंघ, दिल्ली

साहित्य संरक्षक

1 श्री अनूपचन्दजी सेठिया, कोलकाता
2 श्रीमती रतनदेवी सेठिया, कोलकाता
3. श्रीमती उषाजी सेठिया, कोलकाता
4. श्री राकेशकुमारजी सेठिया, कोलकाता
5 श्रीमती नीलिमाजी सेठिया, कोलकाता
6 श्री सुन्दरलालजी दुगड, कोलकाता
7 श्रीमती कुसुमदेवी दुगड, कोलकाता
8 श्री विनोद कुमारजी दुगड, कोलकाता
9 श्रीमती शीतलजी दुगड, कोलकाता
10 श्रीमती रेखाजी झावक, कोलकाता
11 श्री नरेशजी खिवेसरा, दिल्ली
12 श्रीमती मदनदेवीजी खिवेसरा, दिल्ली
13 श्रीमती मीताजी खिवेसरा, दिल्ली
14 श्री सभवजी खिवेसरा, दिल्ली
15 कु पूजा खिवेसरा, दिल्ली
16 श्री सजयजी मुकीम, दिल्ली
17 श्रीमती कल्पनाजी मुकीम, दिल्ली
18 श्री नेमचन्दजी तातेड, दिल्ली
19 श्री जयचन्दलालजी सुखाणी, बीकानेर
20 श्री दीपसिहजी बैद, बीकानेर (राज)
21 श्री कमलचन्दजी बच्छावत, कोलकाता
22 श्रीमती सरलाजी बच्छावत, कोलकाता
23. कु श्वेता बच्छावत, कोलकाता
24 श्रीमती उर्मिलाजी डागा, कोलकाता
25 श्री विमलकुमारजी सेठिया, सूर्यनगर (उ प्र.)
26 श्रीमती सावित्रीजी सेठिया, सूर्यनगर (उ प्र.)
27 श्री दिपेशजी सेठिया, सूर्यनगर (उ प्र)
28 श्रीमती भावनाजी सेठिया, सूर्यनगर (उ प्र.)
29 श्री प्रकाशजी सेठिया, सूर्यनगर (उ प्र)
30 श्री नेमनाथजी जैन, अरिहत नगर, दिल्ली
31. श्री मुन्नीलालजी जैन, अरिहत नगर, दिल्ली
32 श्री रतनलालजी जैन, कपूरथला (पजाव)
33 श्री खेमचदजी वोथरा, मल्लारपुर (कोलकाता)
34 श्रीमती जमनादेवी वोथरा, मल्लारपुर (कोलकाता)
35. श्री ताराचदजी वोथरा, मल्लारपुर (कोलकाता)
36 श्री हुकुमचदजी वोथरा, मल्लारपुर (कोलकाता)
37 श्री राजेशकुमारजी वोथरा, मल्लारपुर (कोलकाता)
38 श्री किशोरकुमारजी मेहता, जयपुर (राज)
39 श्रीमती आशाजी मेहता, जयपुर (राज)
40 श्री अनिलजी जैन, शक्ति नगर, दिल्ली
41 श्री नरेशकुमारजी जैन, कमला नगर, दिल्ली
42 श्रीमती शिल्पाजी लूकड, जलगाव (महाराष्ट्र)
43. श्री पारसकुमारजी मनीषकुमारजी मेहता, ब्यावर (राज)
44 श्री कीमतीलालजी जैन, अरिहत नगर, दिल्ली
45 श्री किशनलालजी पुनीतकुमारजी गोयल, रोहतक (हरियाणा)
46 श्री वावूलालजी पुष्पेन्द्रकुमारजी वम, वैंगलोर (कर्नाटक)
47. श्री कान्तिलालजी सन्तोषजी कटारिया, नागपुर (महाराष्ट्र)
48. श्री मनमोहनजी जैन, मुजफ्फरनगर (उ प्र.)
49 श्री सुरेन्द्रकुमारजी वांठिया, कोलकाता/भीनासर
50 डॉ निर्मल जैन, श्रीमती राजप्रभा जैन, जयपुर (राज)
51. श्रीमती मैनादेवी खिवेसरा, मुम्वई
52. श्री हुक्मचन्दजी खिवेसरा, मुम्वई

अनुक्रमणिका

1. बदलने चला था, खुद बदल गया

मोहनदास कर्मचन्द गाँधी जब विलायत मे थे, तब उनका एक पादरी से सपर्क हो गया। उस पादरी ने गाँधीजी के भारतीय प्रभाव को समझा और वह सोचने लगा कि अगर इस व्यक्ति को प्रभाव मे लेकर ईसाई बना दिया जाये तो इसके पीछे लाखो आदमी ईसाई बन सकते है। बस यही सोचकर पादरी ने गॉधीजी से विशेष सपर्क साधना प्रारम्भ कर दिया।

दोस्ती को आगे बढ़ाने के लिए पादरी ने महात्मा गाँधी को प्रति रविवार अपने यहॉ भोजन करने का आमत्रण दे दिया। गॉधीजी ने कहा– 'मै तो पूर्ण शाकाहारी हूॅ और आपके यहॉ मासाहारी भोजन बनता है। अतः मै आपके यहॉ भोजन कैसे कर सकता हूॅ ?'

पादरी बोला– 'गॉधीजी ! आप हमारे दोस्त है, हम आपके लिए पूर्णतः निरामिष भोजन बनाएगे। लेकिन प्रत्येक रविवार को भोजन तो आपको हमारे यहॉ करना ही होगा।'

गॉधीजी ने पादरी के आमंत्रण को स्वीकार कर लिया और वे भोजन करने प्रति रविवार पादरी महोदय के यहॉ जाने लगे। जब पादरी के यहॉ प्रथम रविवार को ही निरामिष भोजन बना तो पादरी के बच्चो ने पूछ लिया– 'फादर ! अपने घर मे ऐसा भोजन क्यो बनने लगा है ?'

पादरी ने कहा– 'बेटा ! अपने यहॉ मिस्टर गॉधी को आमंत्रित किया है। वे भोजन पूर्णतः निरामिष करते है। इसलिए ऐसा भोजन बना है।'

बच्चे बोले– 'फादर ! वे ऐसा क्यो करते है ?'

फादर ने कहा– 'बेटा ! उनके धर्म मे निरामिष भोजन करना ही वतलाया है।' बच्चो ने पूछा– 'ऐसा क्यों ?'

फादर बोला– 'उनके धर्म मे लिखा है कि जैसे अपने मे जान है, वैसे ही पशु–पक्षियो मे भी जान है। जैसे हमको कोई मारता है तो हमें अच्छा नहीं लगता है,

वैसे ही किसी दूसरे प्राणी को मारने पर उन्हें भी अच्छा नही लगता। इसलिए किसी भी प्राणी को नहीं मारना चाहिये।'

बच्चे- 'फादर ! यह बात बहुत अछी है। फिर हम मांस क्यो खाते है ?'

फादर- 'बेटा ! यह उनके धर्म मे लिखा है, अपने धर्म मे नही।'

बच्चे बोले- 'फादर ! अच्छी बात तो चाहे किसी भी धर्म की हो, उसे ग्रहण करने मे संकोच कैसा ?'

फादर बच्चो की बातें सुनकर अवाक् रह गया, पर उस समय उसने बात टाल दी। गाँधीजी आमंत्रण के अनुसार प्रति रविवार भोजन करने के लिए आते रहे। उनके अनुसार भोजन भी प्रति रविवार निरामिष ही बनता रहा।

बच्चों का सम्पर्क गॉधीजी से बराबर होता रहा। गाँधीजी के सदाचार, सरलता एवं शाकाहारी भोजन से पादरी के बच्चे काफी प्रभावित हुए और एक दिन उन्होने अपने पिता के सामने घोषणा कर दी कि 'पिताजी ! हम भी अब मासाहार सदा के लिए नही खाएंगे।'

यह सुनकर पादरी बड़ा चक्कर मे पड़ गया। पादरी ने सोचा- 'गाँधीजी ईसाई बनेगा या नहीं, पर यह ऐसे ही आता रहा तो मेरे बच्चे जरूर हिन्दू बन जाएंगे। मुझे इससे पहले ही गाँधी का घर आना बन्द करना होगा।'

और एक दिन पादरी ने स्पष्ट शब्दो मे गाँधीजी से कह दिया- 'मै अपना आमत्रण वापस लेता हूँ, तुम्हें बुलाना मेरे लिए काफी महँगा पड़ा। गाँधीजी मुस्कुरा कर रह गए।

❑❑❑

2. तुम्हारा सामान मेरे सामान को लेने गया

एक बार महात्मा गॉधी किसी आवश्यक काम से रेल के फर्स्ट-क्लास डिब्बे मे सफर कर रहे थे। संयोगवश उनके सामने एक अग्रेज अफसर की सीट होने से वह आकर बैठ गया। उसने जब एक फूहड़ टाइप हिन्दू गॉधी को अपने सामने वैठे देखा तो नाक-भौ सिकोड़ने लगा। लेकिन गॉधीजी उसकी इस हरकत की परवाह किये बिना शांतभाव से अपनी सीट पर जमे रहे।

ट्रेन रवाना हो गई। एक के बाद एक स्टेशन पार होने लगे। इतने मे महात्मा गॉधी को शौच बाधा हुई। वे उठे और डिब्बे के किनारे बने बाथरूम मे चले गए। अग्रेज को गॉधी से घृणा तो हो ही रही थी। उसने गॉधीजी के सीधे-सादे कपड़े पड़े देखे। गुस्से मे आकर उस अग्रेज ने गॉधीजी के उन सारे कपड़ो को उठाकर चलती ट्रेन से बाहर फेक दिया।

कुछ ही समय बाद जब गॉधीजी वापस आए तो उन्हे कपड़े नही दिखे। उन्होने अपने उस अग्रेज सहयात्री से अपने कपड़ो के बारे मे पूछा।

वह बोला- 'तुम्हारे कपड़े बाहर हवा खाने गए है।'

गॉधीजी अग्रेज की हरकत समझ गए कि उसने कपड़े बाहर फेक दिये है। वे कुछ नही बोले और शांतभाव से बैठ गए। कुछ देर बाद अग्रेज को भी शौच निवारण की स्थिति बनी तो वह भी उठकर डिब्बे के बाथरूम मे चला गया। इधर महात्मा गॉधी ने भी उस अग्रेज को नसीहत देने के लिए उसका जो सामान पड़ा था, यद्यपि वह गॉधीजी के सामान से अधिक मूल्यवान था, उसे उठाकर बाहर फेक दिया और बडे आराम से बैठ गए। कुछ समय बाद जब अग्रेज आया तो अपने कपड़े बिस्तर न पाकर गॉधीजी से पूछा।

वे बोले- 'आपका सामान मेरे कपड़ो को ढूंढ़ने गया है।'

अग्रेज को यह सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। क्योकि अग्रेज प्रशासन मे किसी हिन्दू द्वारा अग्रेज अफसर के कपड़े बाहर फेक देने का साहस कोई कर सकता है, ऐसा वह सोच भी नही सकता था। पर उसके पास अब कोई जवाब नही था।

❑❑❑

3. जन्मदिन पर घी का दीया

एक बार जब महात्मा गाँधी की जन्मजयन्ति थी। कस्तूरबा ने सोचा कि कुछ विशेष आयोजन तो गॉधीजी को पसंद नही है। अतः ऐसा कुछ विशेष आयोजन नही किया गया। पर रात्रि-प्रभु-प्रार्थना के समय असली घी का दीपक जला दिया गया। गाँधीजी को प्रार्थना के बाद इस बात की जानकारी मिली कि 'मेरे जन्मदिन को प्रतीक बनाकर घी का दीपक जलाया गया है।'

इस बात पर नाराजगी दिखाते हुए वे बोले- 'आज के दिन सबसे खराब बात यह हुई है।'

गॉधीजी ने कहा कि 'हमारे देश मे लाखों-करोड़ो लोगों को जब तेल भी पूरा नसीब नही हो रहा है, तो हमे घी के दिये जलाने का कोई अधिकार नही है। दीप जलाकर जन्मदिन मनाना सार्थक नही है। दीपक ही जलाना है तो इन्सानियत का दीपक जलाया जाये। हम प्रतिज्ञा करे कि हर भारतीय को कम से कम अन्न, वस्त्र और मकान की समस्या से न जूझना पड़े।'

गाँधीजी के इन उच्च विचारों को सुनकर सभी नत-मस्तक थे। कस्तूरबा ने माफी माँग ली।

□□□

4. आप देश निकाला दे सकते हैं

आदमी को अपनी प्रशसा उचित-अनुचित, योग्य-अयोग्य कैसी भी हो, बडी अच्छी लगती है।

एक बार शाही दरबार लगा हुआ था। चाटुकारों का जमघट था। कोई कह रहा था- 'आप जैसा बादशाह पहले नही हुआ।' किसी ने कहा- 'आपका अखूट भण्डार है', तो किसी ने कहा- 'आपके पास विशाल सेना है', किसी ने कहा- 'आपकी शक्ति के सामने किसी की शक्ति नहीं टिकती।'

कहते-कहते एक चाटुकार ने तो सीमा को भी लांघकर कह दिया- 'जो काम परमेश्वर भी नही कर सकते, वह काम आप कर सकते है।'

बादशाह इन सब प्रशसात्मक बातो को सुनकर वड़ा खुश हो रहा था।

बीरबल को यह चाटुकारिता अच्छी नहीं लगी। बादशाह कही अभिमान मे आकर अपना पतन न कर ले, इसलिए उसे यथार्थ के धरातल पर लाने के लिए वह बीच में ही बोल पड़ा- 'हाँ हुजूर ! यह व्यक्ति ठीक कहता है। जो काम परमात्मा नहीं कर सकता वह भी आप कर सकते है।'

बादशाह बोला- 'वह कैसे ?' 'वह ऐसे कि परमात्मा किसी को देश निकाला नहीं दे सकते, पर आप दे सकते है।' बीरवल ने कहा

यह सुनकर बादशाह को अपनी तुच्छता का भान हो गया और वे चाटुकारो की असलियत भी समझ गए।

□□□

5. सर्प ने बदला लिया

जगल मे दो सर्पो मे लड़ाई हो रही थी। एक वृक्ष की छॉव मे था और एक धूप मे था। दोनो मे बराबर घात-प्रत्याघात हो रहे थे। जो धूप मे था, उस पर दोहरी मार पड़ रही थी। जो छाया मे था, वह हावी होता जा रहा था।

यद्यपि खेल बड़ा खतरनाक था, फिर भी उस वृक्ष पर बैठा एक लड़का घबराता हुआ यह सब देख रहा था। नीचे उतर सकता नही। देखते-देखते उसकी दिलचस्पी उनके युद्ध मे बढ़ती चली गई। जो धूप के कारण मार खा रहा था, उस पर उस बच्चे को दया आ गई और उसने अपनी कमीज को खोलकर इस ढंग से नीचे डाला कि वह धूप मे पडे सर्प के पास आकर गिरा। धूप मे पड़ा सर्प बड़ी तत्परता के साथ उस पर चढ़ गया। अब वह नीचे जमीन की जलन से बच गया और घात का प्रत्याघात बड़ी तेजी से करने लगा। सामने वाले सर्प को हरा दिया। वह भाग छूटा।

कुछ समय बाद दूसरा भी चला गया। अब वह बच्चा नीचे उतरा। अपनी शर्ट पहनकर घर चला गया और रात्रि मे सो गया। जब मुह अधेरे पेशाब करने के लिए बाहर निकला तो जो सर्प छाँव मे था, जो कि हार गया था, जिसकी जीत होने वाली थी, पर उस बच्चे द्वारा शर्ट नीचे फेककर उसके शत्रु को सहयोग देने से वह हार गया था; उसका बदला लेने के लिए वह आया। मौके का लाभ उठाकर उसने बच्चे को काट खाया और चला गया।

बच्चे पर सर्प का जहर बढ़ने लगा और कुछ ही देर मे बच्चा मरणासन्न स्थिति मे आ गया। कोई भी इलाज कारगर नही हुआ। बच्चे को मरा समझकर घर वाले श्मशान ले गए। चिता बनाई गई। उसे जलाने की तैयारी होने लगी। इतने मे वह सर्प बडी तेजी के साथ आया, जिसके लिए बच्चे ने अपना शर्ट नीचे फेका था। वह इतने आदमियो से घबराया नही और सीधा चिता पर चढ़ गया। सभी लोग घबराकर पीछे हट गए।

जहाँ पहले वाले सर्प ने काटा था, वहाँ से उसने जहर चूसना शुरू किया और सारा जहर चूस लिया। बच्चा कुछ ही देर मे उठकर बैठ गया। जैसे नीद से जगा हो और वह सर्प भी चुपचाप शान्त भाव से जगल मे चला गया।

लोगो को जब सारी बात की जानकारी हुई तो लगा कि सर्प भी अच्छे का अच्छा और बुरे का बुरा बदला देते-लेते हैं।

□□□

6. अपने से निम्न को देखो

शेख के शादी के जूते फट गये थे। उन्हे बिना जूते के चलने में बड़ी तकलीफ महसूस होती थी। अतः मस्जिद में खुदा से प्रार्थना के साथ जूतो की मंगनी करने जा रहे थे। वे मस्जिद के पास ज्योही पहुँचे उन्होने मस्जिद से बाहर देखा कि कितने ही भिखारी व अन्य लोग दयनीय स्थिति मे बैठे है। उनके साथ ही बिना पैर वाले व्यक्ति भी बैठे हैं। पैर से विवश व्यक्तियो को घिसट्ते हुए चलते देखकर उनके मन में चिन्तन आया कि 'मेरे पास पैर तो है, जूते नही हुए तो क्या हुआ। इनके पास तो पैर भी नही है। इनकी अपेक्षा तो मै ज्यादा सुखी हूँ, मूझे जूते की अपेक्षा नही रखनी चाहिये।'

और वे मस्जिद के बाहर से ही वापस लौट आये। इसी प्रकार व्यक्ति यदि अपने से नीचे वाले की तरफ देखे तो सुखी बनेगा। अगर अपने सं ऊपर यानी धनी व्यक्ति की तरफ देखेगा तो वह अपने ही विचारों से दुखी बन जायेगा।

□□□

7. मातृ-हृदय

महारानी विक्टोरिया की एलीस नाम की एक पोती थी। एलीस का एक दस वर्षीय बेटा था। वह बीमार हो गया। हृदय मे रस्सी भर गयी। वढ़िया से वढ़िया

हॉस्पिटल मे भर्ती करवाया गया। महारानी विक्टोरिया के परिवार का सदस्य बीमार हो, उसकी सेवा मे क्या कमी रह सकती थी ? बड़े-बड़े डॉक्टर व नर्स निरन्तर सभाल कर रहे थे, जरा भी उपेक्षा नही की जा रही थी। अस्पताल मे हर तरह की सुविधा प्रदान की गयी, किन्तु बच्चे की बीमारी निरन्तर उग्र रूप धारण किये जा रही थी। डॉक्टरो ने महारानी विक्टोरिया से स्पष्ट कह दिया कि यह बच्चा अब चार दिन से ज्यादा नही जी सकता, इसके पास आप कोई भी नही जायेगे। एलीस को वश मे रखना होगा, नही तो इस बीमारी के कीटाणु ऐसे है कि जो भी बच्चे के पास जाये या बैठे तो बीमारी के कीटाणु उसके शरीर मे भी प्रवेश कर जायेगे और वह व्यक्ति सिर्फ एक दिन मे ही खत्म हो जायेगा। यह बच्चा तो फिर भी चार दिन जी सकता है। क्योकि इसके शरीर मे इन कीटाणुओ के विरोधक कीटाणु भी है। अतः वे उन्हे खत्म करते रहते है। पर दूसरो के शरीर मे कीटाणुओ ने प्रवेश कर लिया तो एक दिन भी जीना मुश्किल है।

किन्तु एलीस फिर भी बेटे के पास जाने की कोशिश करती। डॉक्टरो ने सोचा कि एलीस एकाएक अन्दर चली न जाये, इसके लिए कमरे से बाहर दरवाजे पर रस्सी बॉध दी गई। एलीस के आगे अब पूर्ण बंधन लग चुका था। जब भी वह अस्पताल मे आती, बाहर खड़ी-खड़ी बेटे को देखती रहती। बेटा बेहोश था। एक दिन बाद बेटे को होश आया। उसने अपनी मॉ को दूर खड़े देखा। वह कहने लगा- 'माँ ! हमेशा तो मेरे पास रहती हो। आज दूर क्यो खड़ी हो ? मेरे पास आ जाओ न।'

शब्द सुनते ही एलीस का हृदय व ऑखे भर आयी। वह दो मिनिट तो कुछ बोल नही सकी। फिर कहा- 'डॉक्टर नहीं आने देते, पर आऊँगी, जरूर आऊँगी बेटा।' नर्सो की पाबदी से उस समय तो कमरे मे नही गयी। घर पर जाकर खूब रोई व कई तरह के उपाय सोचे कि क्या करू ? कैसे बेटे से मिलूं ? आखिर दोपहर मे अस्पताल जाते वक्त उसने एक चाकू अपने पर्स मे डाल लिया। कमरे के बाहर खड़ी हुई थी कि बेटे ने कहा- 'माँ ! आजा ! अभी कोई नही है। मौका देखते ही चाकू से रस्सी काटकर अन्दर घुस गयी। सीधे अपने बेटे के पलग पर जा बैठी और गोद मे लेकर बहुत प्यार करने लगी। डॉक्टर दूसरे मरीजो को देखने गये हुए थे। इधर जैसे ही वार्डमेन आदि जिसको भी पता चला कि एलीस बेटे के पास है, सभी घबरा गए और कहने लगे कि एलीस ने खतरा मोल ले लिया है। डॉक्टर भी दौड़कर आए और कहने लगे- 'एलीस शीघ्रता से उठो' किन्तु वह उठी नही। तभी महारानी विक्टोरिया भी आ पहुँची और बोली- 'एलीस, तुम अन्दर क्यो गयी ? तू मेरी समझदार पोती है, फिर भी तूने कैसा ना समझी का काम किया है ?'

एलीस कुछ देर तक तो सुनती रही, फिर क्रोध में आकर बोली- 'अरे ! तुम सब मुझे कह रहे हो क्यो गयी ? क्या तुमको मालूम नहीं कि यह मेरा बेटा है और मैं इसकी मॉ हूँ। यह दूर से माँ-माँ करे और मै देखती रहूॅ। मेरा हृदय फट गया। आपको भी कहते हुए शर्म आनी चाहिये। मॉ के वात्सल्य को तुम नहीं जान सकते।'

ऐसा कहते-कहते एलीस रो पड़ी और बेटे को प्यार करते-करते थोड़ी देर मे धरती पर गिर गयी। उसका भी उपचार चालू किया गया। दोनों के पलंग एक ही कमरे मे पास-पास लग गए। एलीस को जोरों से बुखार चढ़ा और पाँच-छह घंटे मे ही पुत्र-मिलन हेतु दुनिया छोड़कर चली गयी।

□□□

8. रूप में आसक्त आँखें

श्रीकृष्ण के भाई बलभद्रजी जैन साधु बन गए। उनका रूप इतना सुन्दर था कि वह देवताओं के सौन्दर्य को मात करने वाला था। जिधर से भी बलभद्रमुनि निकल जाते, सब के सब उन्हें देखते रहते।

एक बार की घटना है। बलभद्रमुनि विहार करते हुए किसी गाँव के निकट से जा रहे थे। कुएॅ पर बहुत सारी स्त्रियाँ पानी भर रही थी। स्त्रियों की दृष्टि मुनि के रूप पर पड़ी। सभी एक-दूसरे से कहने लगी- 'देखो-देखो कितना सुन्दर रूप है।' एक तो इतनी पागल हो गयी कि घड़े के गले मे रस्सी बॉधनी थी, उसके स्थान पर अपने बच्चे के गले में रस्सी बाँध दी। अन्य सभी भी मुनि को ही देख रही थी। उस बच्चे की तरफ किसी का ध्यान गया ही नहीं। बलभद्रमुनिजी ने तुरन्त उस बहिन को बच्चे की रक्षा हेतु ध्यान दिलाया। तब कहीं जाकर उसे अपनी गलती का भान हुआ।

इस प्रकार की आसक्ति कितना अनर्थ कर देती है। तब से बलभद्रमुनि ने गाँवों मे विचरण करना भी छोड़ दिया।

□□□

9. दुआओं ने कहाँ पहुँचा दिया।

महारानी विक्टोरिया के बचपन की घटना है।

एक बार बाजार में विक्टोरिया ने एक गुड़िया को देखा। वह उसे बहुत पसन्द आयी। वह उसे खरीदना चाहती थी, पर पास मे पैसे नही थे। अतः खरीद नही सकी। उसने पैसा इकट्ठा करना शुरू किया। पर्याप्त पैसे इकट्ठे हो जाने पर वह फिर बाजार गयी और दुकान मे जाकर गुड़िया को खरीद लिया। बड़ी खुशी से नाचते-नाचते बाहर आ रही थी। क्योकि इतने दिन से पैसे गुड़िया को खरीदने के लक्ष्य से ही इकट्ठे किये थे। आज वह पसन्द की गुडिया हाथ मे आ गयी थी। जैसे ही गुडिया को लेकर दुकान से बाहर निकली कि बाहर एक दीन-हीन फटेहाल गरीब व्यक्ति मिला। जिसका पेट और पीठ एक हो रहा था। मानो कई दिनो से भूखा हो। चला नही जा रहा था और बोल रहा था कि कोई मेरा सहयोग करो। ईश्वर आपका अवश्य ही सहयोग करेगा।

विक्टोरिया का दिल उसे देखते ही पसीज गया और कुछ देने को आतुर हुई; पर कुछ भी नही था उसके पास। अब वह वापस दुकान पर गयी ओर गुड़िया को वापस देकर पैसे के लिये उसने दुकानदार से कहा कि 'मुझे कोई आवश्यक काम याद आ गया है, अतः अभी तो गुड़िया वापस ले लो और पैसे दे दो। इसको फिर कभी खरीद लूगी।'

उसने वे सारे पैसे उस निःसहाय गरीब भिखारी को दे दिये।

उस व्यक्ति ने उस बालिका को ढेर सारी दुआएँ दी। विक्टोरिया आगे से आगे बढ़ती चली गयी। आज पूरे विश्व मे विक्टोरिया का नाम है।

❑❑❑

10. दूज का चन्द्रमा

दिल्ली के बादशाह ने बीरबल को किसी विशेष काम मे फारस के बादशाह के पास भेजा। वहॉ के बादशाह काम-काज निपटने के बाद खाली समय मे बाते करने लगे। बादशाह ने बातो-बातो मे पूछ लिया कि 'मुझमे और दिल्ली के बादशाह मे कौन

अच्छे है ?' बीरबल ने कहा- 'दिल्ली के बादशाह दूज के चन्द्रमा के समान है और आप पूर्णिमा के समान लगते है।'

ऐसा सुनते ही वह बादशाह बहुत खुश हुआ और गले का बहुमूल्य हार उतार कर ईनाम मे दे दिया। बीरबल जब पुनः दिल्ली आया तो बादशाह गुस्से मे थे। उन्होने कहा- 'तुम खाते तो यहाँ का हो और प्रशसा दूसरे बादशाह की करते हो।'

बीरबल ने कहा- 'हुजूर पूर्णिमा के चन्द्रमा को कौन देखता है। दूज के चन्द्रमा का तो सब कोई दर्शन करते है। दूज का चन्द्रमा तो निरन्तर वृद्धि को प्राप्त करता है। वैसे ही आपका राज्य निरन्तर वृद्धिगत है।'

राजा बहुत खुश हुआ और बड़े स्वागत के साथ बीरबल को हाथी पर बिठाकर घर पहुँचाया।

व्यक्ति बुद्धिमान होता है तो हर आपत्ति के समय को पार कर जाता है।

□□□

11. स्वयं का देखो

ईश्वर ने सृष्टि की रचना की, सभी प्राणियो को बनाया। किन्तु मनुष्य को बहुत बुद्धिमान बना दिया। बाद मे मनुष्य की तीव्र बुद्धि को देखकर ईश्वर घबराया हुआ ब्रह्माजी के पास पहुँचा और कहने लगा कि 'इस सृष्टि रचना मे मनुष्य इतना बुद्धिमान बन गया कि वह मेरी भी खोज करने लगा है। अब मै कहाँ जाकर छिपूं ?

ब्रह्माजी ने कहा- 'कोई चिन्ता की बात नही है। आप मानव के दिल मे छिप जाओ। मानव की आदत है कि वह दूसरो को ही देखता है। अपने आप को नही। दूसरो को देखने वाला आपको ढूढ ही नही सकता है।'

अतः परमात्मा की खोज करना है या परमात्मा वनना है तो दूसरो की तरफ देखना छोड़कर अपने स्वय को देखना सीखें।

स्वयं को देखने वाला ही परमात्म पद पर आसीन हो सकता है।

□□□

12. दयालु बादशाह

खलीफा हजरत उमर बादशाह परम दयालु हृदय वाले थे। एक बार रात्रि मे वेष बदलकर अपनी प्रजा का सुख-दुख जानने के लिए घूम रहे थे। उन्हे एक मकान के पास बच्चो के बिलख-बिलख कर रोने की आवाज सुनाई दी। वे उस मकान के पास गये। मकान जगह-जगह से खण्डहर हो चुका था। 'बच्चे क्यो रो रहे है ?' यह जानने के लिए वह मकान के पास गये और छेद मे से अन्दर झाका, देखा, बुढ़िया फटे हुए टाट पर बैठी हुई है। चूल्हे पर हांडी चढ़ी हुई है। बच्चे भूख के मारे रो रहे है। वे रोटी की माँग कर रहे है।

बादशाह ने दरवाजे को खोला। अन्दर गये और पूछा- 'तुम इन बच्चो की मॉ हो क्या ? मॉ के दिल मे कितनी ममता होनी चाहिये ? बच्चे भूख से बिलख रहे है, रोटी की मॉग कर रहे है और तुम रोटी नही दे रही हो।'

उस स्त्री की आँखे भर आई। बोली- 'हमारे तकदीर मे रोटी है कहाँ ?

बादशाह- 'इस हंडिया मे क्या है ?'

महिला- 'आप ही इसमे देख लीजिये।'

बादशाह ने हडिया में देखा तो सिर्फ गर्म पानी ही था। बादशाह ने कहा- 'तुमने सिर्फ पानी को ही चूल्हे पर क्यो चढ़ाया ?' महिला कुछ भी जवाब नही दे पायी। ऑखो से टप-टप आँसू गिरने लगे। बादशाह ने आँखो से ऑसू देखकर समझ लिया- 'बच्चे खाना मॉग रहे है। अतः बच्चो को समझाने के लिये ही पानी की हडिया चूल्हे पर चढ़ा रखी है।'

अब बादशाह ने फिर पूछा- 'तुम्हारे घर मे इतनी भोजन की कमी हो रही है तो बादशाह के पास सूचना करनी थी। तुमने अपने दुःख की बात बादशाह को क्यो नही कही ?' ऐसा सुनकर महिला ने तेजी से कहा- 'क्या बादशाह का कर्त्तव्य नही बनता कि वे अपनी प्रजा को देखे।' बादशाह ने कहा- 'बादशाह के राज्य मे इतने लोग है। वे सबकी देखरेख कैसे कर सकते है ?' ऐसा सुनते ही महिला मे और तेजी आ गयी। गुस्से मे लाल होकर बोली- 'बादशाह किसी आदमी को काम से परदेश भेज सकता है तो क्या उनके पीछे परिवार की क्या हालत हो रही है ? उन्हे सभालने का बादशाह का कर्त्तव्य नही है।'

सुनकर बादशाह एकदम चुप हो गए। महलो मे पहुँचे और उस महिला के

घर मे सामान भेज दिया। वच्चो ने दूध पीया, खाना खाया और आराम से सो गये।

बादशाह दूसरे दिन पुनः उधर पहुँचे तो मालूम हुआ कि महिला प्रसन्नचित्त है। बच्चे आराम से सोये हुए है। बादशाह सबकुछ जानकर बहुत प्रसन्न हुए। इधर उन बच्चो के पिता भी परदेश से आ गये थे।

हजरत उमर बादशाह ने अपने जीवनकाल में वहुतो का उपकार किया। ऐसे उपकारी महादयालु को दुनिया कभी नही भूल सकती।

❑❑❑

13. प्रभुता में भी लघुता

महान् वैज्ञानिक चन्द्रशेखर वैकटरमन एक बार किसी शहर मे पहुँचे। वहाँ के लोगो ने उनके स्वागत मे एक भोज का आयोजन किया, जिसमे हजारो लोगो को निमंत्रित किया गया था। भोज के आयोजन के बाद सभा प्रारम्भ हुई, जिसमे अनेक लोगो ने वैज्ञानिक वैकटरमन की कई शोधपूर्ण उपलब्धियों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। मंच पर बैठे वैकटरमन पर सभी की दृष्टि थी। सभी आश्चर्यचकित थे एक वात से कि चन्द्रशेखर ने सूट के साथ पगड़ी क्यो लगा रखी है ? पर पूछने की किसी की हिम्मत नही थी। सभी के भाषण के बाद जव वैकटरमन का नम्वर आया तो उन्होने कहा- 'आप लोग सोच रहे होगे कि मै इस छोटी उम्र मे भी पगड़ी क्यो लगाता हूँ ? आपका सोचना भी ठीक है। किन्तु मै जहाँ कही भी जाता हूँ, मेरी गलती तो कोई नही बताता, अपितु सब बढ़ा-चढ़ा कर प्रशंसा वहुत करते है। उस प्रशंसा से सिर घमंड के मारे फूलना स्वाभाविक है। अतः उसे दवाये रखने के लिये मैं पगड़ी पहनता हूँ।'

इस प्रकार वैकटरमन ने वड़ी सहजता से अपनी वात को प्रकट करते हुए, शालीनता का व प्रभुता मे भी लघुता का परिचय दिया। अतः उनका जीवन आज भी प्रेरणास्त्रोत बना हुआ है।

❑❑❑

14. जन-विश्वास

चीन देश में एक प्रसिद्ध दार्शनिक कन्फ्यूशियस हुए। एक बार एक शिष्य ने उनसे पूछा- 'शासन प्रभावशाली कैसे बनाया जा सकता है ?'

दार्शनिक- 'पर्याप्त भोजन, अस्त्र- शस्त्र और जनता का विश्वास प्राप्त करके।'

शिष्य- 'यदि तीनो मे से किसी एक का त्याग करना पड़े तो उसे क्या छोड़ना चाहिये।'

दार्शनिक- 'अस्त्र-शस्त्र को।'

शिष्य- 'मान लीजिये, भोजन व जन-विश्वास मे से किसी एक का त्याग करना पड़े तो किसका त्याग करे ?

दार्शनिक गभीरता से बोले, ऐसी स्थिति आने पर भोजन का त्याग कर देना चाहिये। अनतकाल से मानव मृत्यु का ग्रास बनता आया है। भोजन के अभाव मे कुछ लोग मर सकते है।

शिष्य- 'भोजन न छोड़कर यदि जन-विश्वास को त्याग दिया जाये तो कैसा रहेगा ?

दार्शनिक- 'जन-विश्वास का त्याग करने पर सर्वनाश हो जायेगा। कोई भी शासन भोजन और अस्त्र-शस्त्र के अभाव मे तो चल सकता है, किन्तु जन-विश्वास के समाप्त होने पर शासक थोड़ी देर भी नही टिक सकेगा।'

किसी भी संगठन तंत्र शासन को चलाने के लिए परस्पर विश्वास का होना आवश्यक है।

❑❑❑

15. सगो कीजो जान के

एक दलाल था। उसका काम था शादी करवाना। जोड़े फिट करना उसके लिए मामूली काम था। एक लड़के की शादी नही हो रही थी। लड़के की उम्र वढ़ती चली गयी। लड़के की शादी की दलाली के लिए एक गरीव लड़की के पिता के पास पहुँचा और शादी की बात की। गरीब पिता को भी अपनी लड़की की चिता थी ही। गरीब पिता ने पूछा- 'लड़के की उम्र कितनी है ?'

दलाल ने कहा- 'होगी 20-21 वर्ष की।'

पिता ने पूछा- 'वह लड़का कैसा क्या है ?' दलाल बोला- 'वह एक दृष्टि से सबको देखता है, यानी सभी को समान दृष्टि से देखता है। एक हाथ से दान करता है अर्थात् समभाव से समान भाव से दान देता है। किसी की निन्दा नहीं सुनता। हर काम के लिए हर समय एक पैर पर खड़ा रहता है।'

गरीब पिता उन गुणो को सुनकर बड़ा खुश हुआ। सोचा- 'चलो लड़की अच्छे ठिकाने पहुँच जायेगी', पर यह नही सोच पाया कि लड़का इतना गुणवान या एकदम सही होता तो इतनी दूर गरीब लड़की को दलाल के माध्यम से देखने ही क्यो आते ? पर गरीब इतना सोचे भी क्यो ? सगाई पक्की कर दी।

शादी के समय दूल्हा घोड़े पर चढ़कर तोरण पर आ रहा है तब सारे गाँव वाले आपस में बाते करने लगे कि लड़का अपंग है। उस गरीब पिता ने भी देखा तो बहुत दु:ख हुआ। सोचा यह क्या अनर्थ हो गया। वह दलाल भी बारात मे आया था। अत: उसे बुलाकर गॉव वालों ने मिलकर कहा- 'तुमने इस दूल्हे का कितना गलत-गलत परिचय दिया था।' दलाल ने कहा- 'सुनो ! मैने बिल्कुल सही परिचय दिया है। मैने ये सब बाते पहले ही कह दी थी कि एक आँख से देखता है, एक हाथ से दान करता है। एक पॉव पर खड़ा रहता है।'

दुल्हन के पिता ने कहा- 'हॉ, कहा तो ऐसा ही था पर मैने उसे गुण रूप से ग्रहण किया था। अच्छा तुमने तो दुल्हे की उम्र 20-21 वर्ष बतायी थी और यह तो 40 वर्ष ऊपर दिख रहा है।

दलाल ने कहा- 'आप 20 और 21 जोड़ लीजिए! कितना होता है ? वही उम्र है।'

गॉव वाले कहने लगे- 'दुल्हन के पिता तो बुरी तरह से ठगे गये है।'

इसीलिए कहा गया है-

'पानी पीजो छान के, सगो कीजो जान के'

□□□

16. समझदार को सहज है

एक स्थान पर दो व्यक्तियो मे भयकर लड़ाई हो रही थी। तू-तू मै-मै के साथ-साथ मारामारी भी प्रारभ हो गयी थी। सैकड़ो लोग देख रहे थे। पर यह किसी को पता नही कि आखिर लड़ाई किसलिये हो रही है।

एक साहसी सज्जन व्यक्ति भी उधर से निकल रहा था। उसने भी वह लड़ाई का दृश्य देखा। वहाँ उपस्थित लोगो से पूछा कि 'ये दोनो क्यो लड़ रहे है ?' सभी ने यही कहा- 'कुछ पता नही।'

'कुछ न कुछ तो है ही।' सज्जन ने कहा- 'एक व्यक्ति को मै पकड़ता हूँ। दूसरे व्यक्ति को तुम लोग पकड़ लेना। फिर उनसे पूछते है कि आखिर बात क्या है ? ऐसे तो लड़ते-लड़ते खुन-खराबा कर देगे।'

उन लोगों ने वैसा ही किया। लड़ते हुए लोगो को पकड़ लिया। सज्जन व्यक्ति ने एक से पूछा- 'क्या बात हुई है ?' उसने कहा- 'मैने इसको पावली उधार मे दी थी। वह नही दे रहा है।' दूसरे व्यक्ति से पूछा- 'तुम्हे क्या हुआ ?' तो उसने कहा- 'मैने इससे चवन्नी उधार ली थी। वही मै इससे कह रहा हूँ कि चवन्नी ले लो। पर यह मुझको कहता है कि मैने तो पावली दी थी। जबकि उसने पावली मुझको दी ही नही।'

सज्जन समझ गया कि बिना मतलब की लड़ाई हो रही है। उसने कहा- 'लाओ तुम्हारी चवन्नी।' उस व्यक्ति ने चवन्नी उसको हाथ मे थमा दी। बोला- 'मै किसी का पैसा खाना ही नही चाहता।' सज्जन ने कहा- 'बिल्कुल ठीक बात है। तुम सही कह रहे हो।' उस दूसरे व्यक्ति से सज्जन ने कहा- 'यह लो तुम्हारी पावली।' वह खुश हो गया। और कहने लगा- 'आप आ गये, इसलिए आपने दिलवा दी। नही तो वह तो दे ही नही रहा था।'

सज्जन ने दोनो को समझाकर झगड़ा समाप्त करवाया, कहा भी है-

समझदार को सहज है, है गॅवार को धोखा।

चावल चोखा एक है, समझन वाला बोगा।

□□□

17. क्रोध करके धोबी बना

एक महात्माजी की सेवा मे एक देव रहता था। वह महात्मा की इतनी सेवा करता था कि धूप होती तो छाया कर देता व सर्दी होती तो धूप निकाल देता।

एक बार वे महात्मा नदी के किनारे धोवी के कपड़े धोने की शिला पर सो गये। धोबी आया, देखा महात्मा सोये है। धोवी ने महात्मा को निवेदन किया- 'यह मेरी आजीविका का साधन है। आप इस पर से उठ जाईये और भी बहुत जगह है। आप जैसे महात्मा के लिए जगह की कोई कमी नहीं है।' उस धोबी ने सोचा- 'महात्मा को कोई तकलीफ होगी, अत: नहीं उठ रहे है।' वह धोबी कपड़े लेकर पुन: घर पर चला गया।

दूसरे दिन धोबी कपड़े ज्यादा होने से वड़े सवेरे जल्दी आया। किन्तु महात्मा वहीं आये हुये थे। उस दिन भी महात्मा को अनुनय-विनय किया, किन्तु प्रतिफल कुछ भी नही मिला। क्योंकि महात्मा से कुछ कहना उपयुक्त नही लगा, अत: वह दूसरे दिन भी चुपचाप चला गया।

तीसरे दिन धोबी पुन: आया। वही स्थिति थी। नम्रता से कहने के बावजूद भी महात्मा उठ नही रहे है। धोबी ने हाथ से उनको उठाना चाहा, तब भी महात्मा नहीं उठे। बार-बार धोबी के द्वारा कहने पर महात्मा ने गुस्से मे धोवी के एक जोरदार चपत जमा दी। उसे गालिया देने लगे। इतना होने पर धोबी कव चुप रहने वाला था। वह भी आमने-सामने हो गया और महात्मा को शिला से नीचे गिरा दिया। महात्मा को क‌ई जगह चोटे लगी। महात्मा को गिरने के बाद ध्यान आया कि 'मै तो साधु ठहरा, क्षमा रखनी चाहिये थी। लेकिन मै भी कैसा निकला, जो गुस्सा करता रहा।

जव दोनो की लड़ाई समाप्त हो गयी तो वह देव नीचे महात्मा के पास आया और उन्हे संभालने लगा। धूल आदि साफ करने लगा। महात्मा ने देव से कहा- 'इतनी देर कहाँ पर गये थे। आये क्यों नहीं ?' देव ने कहा- 'मैं तो वहुत देर से देख रहा था दोनों की लड़ाई। पर मुझको यह पता ही नहीं चल पा रहा था कि कौन धोवी है,और कौन महात्मा ? क्योंकि आपका व्यवहार भी महात्मा जैसा क्षमाशील न था। आप भी धोवी के साथ धोवी ही दिखाई दे रहे थे। पर आप जव पश्चात्ताप करके पुन: महात्मा के पद पर आरूढ़ हुए तो मैं सेवा में तुरंज हाजिर हो गया।'

क्रोधी की सेवा मे देवता भी नहीं आते और न ही मानव भी क्रोधी की

सेवा कर सकता है, क्योंकि क्रोधी स्वयं भी क्रोध मे जलता है व सपर्क मे आने वालो को भी क्रोधी बना देता है।

□□□

18. तीन दिन की जेल

एक सेठ की कोठी व एक गरीब की झौपड़ी पास-पास मे थी। अतः सेठ के बच्चे व गरीब के बच्चे साथ-साथ मे खेलते थे। वैसे खेल-खेलने मे गरीबी-अमीरी बाधक नही होती। किन्तु एक बार सेठ के बेटे उमेश के पास अनार के दाने पोलीथीन में डाले हुए जेब में थे। वह बच्चा बार-बार निकालकर खेलते हुए खाता जा रहा था। गरीब का बच्चा लक्ष्मण उसके साथ मे ही था। उमेश ने अनार के कुछ दाने हाथ मे लेकर लक्ष्मण को देने की एक्टिंग की और कहा- 'ले लक्ष्मण ! ले' लक्ष्मण ने जैसे ही लेने के लिए हाथ बढ़ाया कि उमेश ने हाथ वापस खीच लिया। इस प्रकार से बार-बार देने हेतु हाथ आगे बढ़ाकर वापस खीच लेता। बीच-बीच मे एक दो बार कुछ दाने दे भी दिये। तीन वर्षीय बच्चे लक्ष्मण ने खा भी लिये। अनार के दानो का मिठास उसके जबान पर चढ़ गया। घर पर गया और माॅ से कहने लगा- 'माँ ! मै अनार खाऊगा।' माॅ सोचने लगी। इस गरीब की झौपड़ी मे अनार कैसे आयेगा ? जहॉ दो समय पूरा खाने को भी नसीब नही है। वहॉ अनार....। माॅ ने कहा- 'बेटे ! अनार अच्छी वस्तु नही होती। उसमे तो सिर्फ बीज ही बीज होते है। बीज के अलावा खाने जैसा कुछ भी नही होता है। बेटा ! तुझे भूख लगी है। मै अभी-अभी राबड़ी बना देती हूॅ। तू गरम-गरम राबड़ी पी लेना। वह बहुत अच्छी होती है। तू हमेशा उसे बड़े शौक से खाता है। वही तेरी मनपसन्द राबड़ी अभी तैयार किये देती हूॅ।'

किन्तु बेटे ने जिद पकड़ ली, 'नही मुझको तो अनार खाना है। अनार बहुत मीठा होता है। मै तो वही खाऊंगा।'

माॅ सोचने लगी- 'यह अनार कहॉ खाकर आ गया। मेरी इस झौपड़ी मे तो अनार का नाम भी कोई नही लेता।' बच्चे से कहा- 'देख बेटा ! अपन तो ऐसी गन्दी चीजे कभी खाते भी नही है। तू बेकार की जिद मत कर।' लक्ष्मण को तो वही अनार के दाने याद आ रहे थे। अतः जोर-जोर से रोते हुए कहने लगा- 'माॅ मै राबड़ी नही,

अनार ही खाऊँगा।' अनार-अनार करके जोर-जोर से रोने लगता है। माँ का दिल कैसा-कैसा होने लगता है। सोचने लगी, 'इस गरीव माँ की भी कैसी स्थिति है कि वह अपने बच्चे की छोटी-सी इच्छा भी पूरी नहीं कर सकती। एक अनार जैसी वस्तु की माँग कर रहा है, वह भी लाकर नहीं दे पा रही हूँ। 25 पैसे भी इस झोपड़ी के अन्दर इस समय उपलब्ध नही है। हाय ! मेरी भी यह कैसी स्थिति है ?' सोचते-सोचते आँखों में पानी भर गया। पर हो क्या सकता है ? वच्चे को इधर-उधर घुमाती हुई दूसरी-दूसरी बाते करती हुई भूलावे मे डालना चाह रही है, किन्तु वच्चा भूल नहीं रहा है। आखिर उसने बच्चे से कहा- 'बेटे ! मेरे पास अभी पैसा नही है। तेरे पापा अभी काम पर गए है। शाम को आयेंगे तव तेरे कहे अनुसार अनार जरूर लायेगे। तू अभी तो यह राबड़ी खाले।'

बच्चे ने जब यह सुना कि पापा लायेगे तो वह चुप हो गया। पापा शाम को आयेंगे। पापा के साथ जाकर अनार लाऊंगा। उसी आशा के साथ वह रावड़ी खाने वैठ गया।

पूरे दिन खेलता रहा। बीच मे माँ को बार-बार अनार की वात भी कह देता। माँ अन्यान्य बातें करके भूलावे में डालना चाहती है, पर वह भूल नही रहा है। शाम होते ही घर के वाहर जाकर खड़ा हो गया पापा के इन्तजार मे। ज्योंहीं पापा आये। वह कहने लगा- 'बाजार से अनार लेने चलो।' उसके पापा ने सोचा- 'इस बच्चे के मुह पर अनार का नाम कहाँ से आ गया ?' बेटे को गोद में उठकार झौपड़ी में गया। वही अनार-अनार की रटन लक्ष्मण के मुंह से हो रही है। पत्नी से पूछताछ की तो पत्नी ने बताया कि बच्चों के साथ खेलने गया था। उसके बाद जैसे ही आया और अनार की रटन शुरू हो गई। कहता है, 'मैने अनार के दाने खाये है।' लगता है पड़ौस की कोठी वाले उमेश ने दिए होगे।

लक्ष्मण के पापा कहने लगे- 'मै इसे बाजार ले भी जाऊं तो जेब में पैसे नहीं है तो कैसे अनार ला सकता हूँ ?' वड़ी परेशानी आ गई सामने। उसे वहुत समझाया कि 'वेटे ! अनार अच्छी चीज नहीं होती। इसे अच्छे बच्चे नहीं खाते।' किन्तु बालहठ थी उस बच्चे की आखिर उसके पापा ने एक रास्ता खोजा और कहा- 'देख मेरी जेब में अभी एक भी पैसा नही है कल मैं मिल जाऊंगा, तव दिला दूगा।' वेटा छोटा था, पर इतना तो उसे भी पता था कि पैसे विना कोई वस्तु नहीं मिलती। अतः रोते-रोते ही बोला- 'अच्छा ! कल आप जरूर लेकर आना।'

दूसरे दिन सवेरे उसके पापा जैसे ही मिल जाने लगे, वेटा भी उठ गया और कहने लगा- 'अनार जरूर लेकर आना।' पापा ने कहा- 'ठीक है।' मिल से शाम को जैसे ही लक्ष्मण के पापा लौट रहे थे, लक्ष्मण वाहर खड़ा था। वह दौड़कर पापा के

पास गया। थैला हाथ मे से लेकर जल्दी-जल्दी देखा तो उसमे अनार थे ही नही। लक्ष्मण ने कहा- 'पापा ! अनार नही लाये ?' पापा ने कहा- 'वेटा ! घर मे चलो, उसके बाद बताता हूँ।'

लक्ष्मण ने कहा- 'पापा मुझे जल्दी बताओ। अनार कहाॅ है ?' पापा ने कहा- बेटे ! आज तो पैसे पास मे थे नही। कल महीने का अन्तिम दिन है। अतः पैसे जरूर मिलेगे। मै कल जरूर तुम्हारे लिये अनार लेकर आऊंगा।' बेटा रोता भी है, पर हो क्या सकता था ? रोते-राते ही सो गया। सवेरे जैसे ही पापा जाने लगे। वही बात दुहराई कि 'पापा अनार जरूर लेकर आना।' पापा ने फिर कह दिया- 'ठीक है।'

लक्ष्मण के पापा मिल पहुॅचे। आज महीने का अतिम दिन था। सभी को महीने की तनख्वाह मिल रही थी। जैसे ही लक्ष्मण के पापा का नम्बर आया तो उसका नाम रजिस्टर मे देखते ही मुनीम बोला कि तुम्हारी महीने मे दो दिन अनुपस्थिति रही है, इसलिए तुम्हे दो दिन बाद पगार मिलेगी। वह बहुत अनुनय विनय करता है। मुझे पैसे की सख्त आवश्यकता है। मुझे दो दिन बुखार आ गया था। अतः काम पर नही आ सका। आप दो दिन की पगार काट लीजिए। 28 दिन के पैसे दे दीजिये। मेरा बेटा, मेरा बच्चा बहुत रो रहा है। मुझ अभागे के पास दो रुपये भी इस महीने मे नही बचे है। आप कृपा करके दे दीजिये।

मैनेजर ने उससे कहा- 'भाई ! मेरे हाथ मे कुछ भी नही है। तुम्हे जो भी कुछ कहना हो वह सेठ से कहो। मै तुम्हारे जैसा ही वर्कर हूँ।' वह सेठ के घर पहुँचा और बहुत नम्रता के साथ कहने लगा- 'सेठ जी ! मै गरीव हूँ। मुझे इस महीने मे दो दिन बुखार आ गया था, अतः मिल नही आ सका। आप मेरे दो दिन के पैसे काट लीजिये और 28 दिन की पगार दिलवा दीजिये।' सेठ ने भी कह दिया- 'दो दिन बाद तुम ले जाना। इसके पहले कुछ भी नही हो सकता। हम किस-किस की सुनते रहे। इस तरह तो हमेशा कोई न कोई व्यक्ति समस्या लेकर आता ही रहेगा।'

वह बोला- 'सेठ जी ! और कुछ नही हो सकता है तो पाच रुपये उधार ही दे दीजिये। बेटा बहुत रो रहा है। जिद पर चढ़ा हुआ है। तीन दिन से बहला, बहलाकर छोड़कर आ रहा हूँ। आप गरीब की ओर थोड़ा सा ध्यान दे दीजिये।' सेठ ने कहा- 'चुपचाप चले जाओ यहाॅ से। नही तो ये नौकर धक्का देकर अभी वाहर निकाल देगे।' नौकर भी उसे बाहर निकालने के लिये पास मे आने लगे। परन्तु उससे पहले ही वह घर के बाहर निकल पड़ा।

बाहर आकर वह सड़क के किनारे वृक्ष के सहारे खड़ा हो गया। आँखो से तड़ातड़ ऑसू गिर रहे थे। बच्चे की भोली सूरत सामने दिख रही थी। अनार कैसे ले

जाकर दूं ? कैसे बच्चे की छोटी सी माँग पूरी करूं ? थोड़ी देर के बाद आँखे खोली, सोचा, 'घर तो जाना ही पड़ेगा। पत्नी भी इन्तजार कर रही होगी।' लड़खड़ाते पाँवों से धीरे-धीरे वह घर की ओर बढ़ता जा रहा था।

मिल से घर जाते समय रास्ते मे फल की दुकाने आई। एक दुकान पर उसे अनार का ढेर दिखा। इधर बच्चे की माँग उसे सता रही थी। सोचा, एक अनार उठा लूं और धीरे से अनार उठाने के लिये हाथ बढ़ाया। ढेर से ऊपर से उठाने पर तो दुकानदार की नजर पड़ सकती थी, अतः नीचे से ही एक अनार उठा लिया और दौड़ने लगा। जैसे ही ढेर के बीच से एक अनार निकला, सारा ढेर बिखर गया। दुकानदार को पता लग गया कि वह जो आदमी भाग रहा है, वही चोर है। दुकानदार जोर से चिल्लाया 'चोर-चोर, पकड़ो इसे।' शीघ्र ही वह पकड़ा गया।

उसने अपनी जिन्दगी में कभी कोई चोरी की नही थी। अतः चोरी करना आता भी नही था। देखते ही देखते पुलिस भी आ गयी। हाथो-पैरों में हथकड़ियाँ, बेड़ियां डल गयी। लोग कहने लगे- 'यह व्यक्ति लगता तो भोला है, सरल है, किन्तु आजकल लोगो का क्या पता चलता है ?'

वह चोर साबित हुआ। पुलिस ने उसे कारागृह में डाल दिया। थानेदार ने काफी पूछताछ की। उसने अपनी सारी स्थिति सही-सही बता दी, पर ऐसे कौन विश्वास करने वाला था।

रात्रि मे पुलिस की गाड़ी उसके बताये अनुसार पते पर खोज करने घर पर पहुँची। गाड़ी झौंपड़ी से बाहर खड़ी हो गई। पुलिस गाड़ी से बाहर आयी। झौपड़ी मे . जोर-जोर से रो रहा था। पापा अभी तक अनार लेकर नहीं आए है। तीन दिन । गये। मै अनार खाऊंगा। माँ उसे समझा रही थी- 'बेटा ! आज उनके महीने का अन्तिम दिन था। अतः पगार लेने में देर हो गयी होगी। फिर मिल से घर भी इतनी दूर है। आते ही होगे तेरे पापा। आज जरूर तेरे लिए अनार लेकर आयेगे।' बच्चा बार-बार अनार की बात दोहराये जा रहा था और माँ भी उसे समझाये जा रही थी।

पुलिस ने वह सारी बाते बाहर खड़े-खड़े सुनी। उनको विश्वास हो गया कि वह व्यक्ति सामान्य व्यक्ति है। बच्चे की जिद से अनार उठा लिया है। वह कारागृह में भी सही बोल रहा था। फिर भी घर की तलाशी लेना है व उसकी पत्नी से भी पूछताछ करनी है। पुलिस झौपड़ी में गई। लक्ष्मण की माँ से पूछताछ की। वही अनार वाली बात पुलिस को बताई। झौंपड़ी की तलाशी ली गई। तो पुलिस को उसकी अति गरीबी ही महसूस हुई। पूलिस ने कहा- 'आप चिन्ता न करे। मिलना हो तो सुबह जेल

मे आ जावे। वैसे तीन दिन के बाद छुट्टी मिल जायेगी।' कहते हुए पुलिस चली गई।

मॉ-बेटे यह जानकर बहुत रोये कि लक्ष्मण के पापा को एक अनार के चोरी करने के मामले मे जेल हो गई है। बेटा कहने लगा- 'पापा को घर बुलाओ। मै अब कभी अनार का नाम नही लूंगा।'

जैसे-तैसे रात्रि व्यतीत की। सवेरे जेल पहुँचे और लक्ष्मण अपने पापा को जेल के शिकंजे मे, बधन मे देख जोर-जोर से रोने लगा और कहने लगा- 'पापा घर आ जाओ। आगे से कभी ऐसी जिद नही करूंगा। मैं कभी भी अनार का नाम नही लूगा।' लक्ष्मण की माँ ने भी दु:ख प्रकट किया।

तीन दिन के बाद जेल से छुट्टी हुई। लक्ष्मण ने प्रतिज्ञा कर ली कि जिन्दगी मे मै कभी भी अनार नही खाऊंगा।

तीन दिन की जेल ने उस बच्चे के जीवन को परिवर्तित कर दिया; जबकि यह आत्मा अनंतकाल से संसाररूपी कारागृह मे अष्टकर्मो के भारी बंधन मे जकड़ी हुई बैठी है। फिर भी कोई घबराहट नही, कोई विचार नही। मौजमस्ती है, पापाचरण करने मे लगे हुए है।

जैसे तालाब के पानी के अन्दर खड़े हुए सिर पर कितना भी पानी आ जाये, तो भी भार नही लगता; उपर उसमे से एक घड़ा भरकर सिर पर रखा जाये तो कितना वजन लगता है। वैसे ही रात-दिन पापाचरण करके ससाररूपी कारागृह मे रहते हुए घबराहट नही आती। जबकि उस बच्चे रूपी साधक को तीन भवो का संसार भी पसद नही आता। वह अतिशीघ्र ससाररूपी कारागृह से निकलना चाहता है।

□□□

19. धन में अन्धा

बचपन के दो मित्र थे। दोनो मे आपस मे घनिष्ठ मित्रता थी। एक-दूसरे को बहुत चाहते थे। एक बार दोनो ने आपस मे सलाह करके प्रतिज्ञा ग्रहण की कि हम भले ही कही भी रहे, पर मित्रता कभी नही छोड़ेगे।

जीवन मे अवसर आते ही है। एक मित्र शहर मे चला गया। अच्छी नौकरी लग गई। पद भी ऊँचा मिल गया। अलग से भी धन बहुत कमाया। **अर्थात् पूर्व** की

पुण्यवानी का उदय जबरदस्त था। नौकर-चाकर सेवा मे उपस्थित रहते। घर मे आवागमन भी काफी रहता।

एक बार वह बचपन का मित्र अपने मित्र से मिलने के लिए शहर मे पहुँच वह उसके बंगले पर गया। धनी मित्र ने उस मित्र को देख लिया व पहचान भी लिया; किन्तु इधर-उधर देखने लगा गया। अन्य से बातें करने लग गया। कमरे मे जाने लगा। आगत मित्र ने सोचा- 'बस प्रतिज्ञा टूट गई है।' साहस के साथ पूछा- 'क्या तुमने मुझको पहचाना नहीं।' शहरी मित्र ने कहा- 'तुम कौन हो ? कहाँ से आ रहे हो ? यहाँ कैसे आना हुआ ?'

ग्रामीण मित्र ने कहा- 'मै नारायणपुरा का रहने वाला रामनाथ हूँ। सुना था कि मेरा मित्र अन्धत्व को प्राप्त हो गया है, अतः मैं उससे मिलने के लिये आया हूँ।'

इतने दिन तो मैने सिर्फ सुना ही था। आज मैने अपनी आँखो से स्पष्ट देख लिया है कि प्रतिज्ञा तोड़ने वाला मित्र वास्तव मे अन्धा हो गया। ऐसा कहते हुए तुरंत वह घर से बाहर हो गया और अपने गाँव चला गया। फिर कभी मित्र से मिलने नहीं आया।

□□□

20. कायर का सहयोगी कोई नहीं

एक व्यक्ति धन कमाकर परदेश से अपने गाँव की ओर आ रहा था। रास्ते में उसे दूर से डाकू दिखाई दिये। अब उसे डर लगने लगा। सोचा, वर्षो की कमाई मेरी ऐसे ही चली जायेगी। मै घर जाकर पत्नी व बच्चो को क्या दूंगा ? आदि। ऐसा सोचकर वह बहुत घबराया। एक पगडंडी पर भागा, पर रक्षा का अभी तक कोई उपाय नहीं दिख रहा था। आखिर जंगल मे एक मंदिर दिखाई दिया।

वह उस मन्दिर मे चला गया और देवी को प्रणाम करके बोला- 'देवी, मेरी रक्षा करो।' उस जंगल की देवी बहुत प्रभावशाली थी। जो भी वहाँ पर माँग कर लेते, वह पूरी हो जाती। उसने भी रक्षा की माँग की थी।

देवी ने कहा- 'चोर आयें तो तुम जोर से हुंकार की आवाज करना वे उस हुंकार की आवाज सुनते ही वापस भाग जायेगे।'

देवी ने परेदशी को राह बता दी।

परदेशी बोला– 'देवीजी ! भय के कारण मुझमे इतनी शक्ति ही नही रही है कि मै उन चोरो के सामने कुछ आवाज कर सकू।'

देवी ने कहा– 'तुम सिर्फ उन चोरो को कुछ समय तक एक नजर से देख लेना।' परेदशी ने बोला– 'मेरी आखे चोरो को देख ही नही सकती। माता ! मुझे बहुत डर लगता है। मै क्या करू ? मेरी रक्षा करो।' देवी ने कहा– 'अच्छा तुम दरवाजा बद कर लो ताकि चोर अन्दर प्रवेश ही न कर सके।–

परदेशी– 'देवी ! आप मेरा बहुत सहयोग कर रही है, किन्तु डर के मारे हाथ ही ऐसे हो गए है कि कुछ काम ही नही कर रहे है और चोर तो आने ही वाले हैं सामने ही आ रहे होगे। मेरे हाथो मे वह हिम्मत नही है कि मैं दरवाजा बद कर सकूं।'

देवी करुणा से आर्द्र–हृदय थी। उसने कहा– 'अगर तुमको ऐसा लग रहा है कि चोर आने ही वाले है तो तुम जल्दी से मेरी प्रतिमा के पीछे छिप जाओ।'

परदेशी– 'हे देवी ! आपकी मुझ पर महान् कृपा है। पर क्या करू ? चोरो से ऑख चुराकर भागते–भागते मेरे पॉव बुरी तरह थक गए है। अब तो एक कदम भी उठने को तैयार नही है। अतः मै तुम्हारी प्रतिमा के पीछे छिप नही सकता।'

देवी– 'ऐसे पुरुषार्थहीन, आलसी, कायर व्यक्ति का सहयोग मै भी नही कर सकती।'

अंग्रेजी मे एक बहुत पुरानी कहावत है, 'ईश्वर भी उन्ही की सहायता करते है, जो अपनी सहायता स्वय करता है।'

□□□

21. बहुत अन्दर तक लग गयी

एक घर मे मुखिया व्यक्ति को शराब पीने की बहुत आदत थी। घर के सदस्य कभी हिम्मत करके शराब छोड़ने को कहते तो शराव के गुण और वता देता। धीरे–धीरे वह दुर्गुण बेटे मे भी आ गया। बेटा पहले चुपके–चुपके और वाद मे सवके सामने ही पीने लगा। वे ही आनुवाशिक संस्कार आगे बढ़े और पोते की भी इच्छा जागृत हो गयी। किन्तु पोता पीये तो कैसे पीये ? क्योंकि अभी शादी जो करनी थी व ससुराल से धन भी लाना था। फिर भी पोते ने बीड़ी तो पीना शुरू ही

श्री

एक बार दादाजी के सामने बैठकर पोता बीड़ी पी रहा था। दादाजी ने कहा- 'बेटा ! बीड़ी पीना बुरी बात है।'

एकदम जल्दी से पोता बोला पड़ा- 'शराब पीना बुरा या बीड़ी पीना।'

प्रश्न सुनकर दादाजी गहरी नीद से जाग गये। अन्तरंग को उस बात ने ऐसा छुआ कि जो शराब बहुत उपाय करने से भी नही छूटी, वह सहज ही में छूटी गयी। दादाजी ने दृढ़प्रतिज्ञा की कि अब आगे से कभी शराब नही पीऊंगा।

□□□

22. मातृभक्त होलीन

चीन मे होलीन नाम का एक मातृभक्त महान् व्यक्ति हुआ। घर मे लाखो का धन था। एक बार रात्रि मे डाकू घुस गये। अन्दर घुसते ही डाकुओं ने होलीन को खम्भे से बांध दिया। उस घर में होलीन के अलावा उसकी बूढ़ी माँ थी। वह अपने आप पलंग से उठ नही सकती थी।

माँ-बेटे, दोनों ही अब सिर्फ देख सकते हैं, किन्तु कर कुछ नही सकते। वे डाकू सारा धन इकट्ठा कर रहे है और जल्दी-जल्दी गठरियाँ बाँध रहे है। सारे जेवरों की एक गठरी बांध ली। उसके बाद बर्तन व कपड़ो का नम्बर आया। वे भी सारे बांध रहे थे। रसोई में एक पुरानी कड़ाही देखी, वह भी उठाकर पोटली मे डालने लगे। तभी होलीन के मुंह से एकदम शब्द फूट पड़े कि आप सबकुछ ले जाओ किन्तु यह कड़ाही मत ले जाओ। डाकुओ को आश्चर्य हुआ कि इतना बहुमूल्य सामान बांधा, तब तक चुपचाप देखता रहा। अब एक पुरानी कड़ाही के लिए एकदम बोल उठा।

डाकुओ को आश्चर्य हुआ। उन्होने होलीन से प्रश्न किया कि 'तुम्हें कडाही किसलिए चाहिये ?' होलीन ने कहा- 'मेरी माँ बीमार है। सवेरे दुकाने खुलेगी, उससे पहले तो दूसरी कड़ाही आ नही सकती। उस समय यानी नौ बजे तक मेरी माँ को भूखा रहना पड़ेगा।'

ऐसा सुनते ही उन डाकुओं की आँखो मे से अश्रुधारा बह निकली। उस मातृभक्त होलीन के चरणो मे वे गिर पड़े और कहने लगे कि 'हम तुम्हारे इस विनय गुण से बहुत प्रभावित है। आपके गुणमय जीवन से हम शिक्षा ग्रहण करते हुए हमेशा-हमेशा के लिए धन हरण करना छोड़ते हैं। आपके सामने हम दृढ़ प्रतिज्ञा करते हैं।'

ऐसा कहते हुए डाकू वह सारा धन वहीं छोड़कर माँ के चरण स्पर्श करते हुए चले गए।

वास्तव मे मातृभक्त व्यक्ति को माता-पिता का अन्तरंग आशीर्वाद मिलता ही है। माता-पिता के आशीर्वाद मे वह शक्ति है कि मानव के हर संकट स्वतः ही टलते हुए चले जाते है।

□□□

23. सहजिक साधना

दुर्वाशा ऋषि एक वृक्ष के नीचे बैठकर कठोर तपस्या कर रहे थे। तपस्या के प्रभाव से उन्हे तेजोशक्ति प्राप्त हो गई। जिस किसी को वह क्रोध से देखते, वही खत्म हो जाता था। उसी समय वृक्ष पर बैठी एक चिड़िया ने बीट की। वह दुर्वाशा ऋषि पर पडी। उन्हे गुस्सा आ गया। क्रोध के साथ ऊपर देखा तो वह चिड़िया दिखी। ऋषि के देखने मात्र से ही वह चिड़िया तुरन्त तड़फड़ाती हुई नीचे गिरी और खत्म हो गयी। ऋषिवर देखकर बहुत खुश हुए।

एक बार वे भिक्षा लेने के लिए गॉव मे गये। एक मकान का दरवाजा बद था। उन्होने आवाज दी- 'दरवाजा खोलो।' घर के अन्दर से बहिन ने कहा- 'थोड़ी देर रुको। अभी खोलती हूॅ।' घर के बाहर धूप थी। ऋषि के पैर जलने लग गये। कुछ देर बाद महिला ने दरवाजा खोला। महिला को देखते ही ऋषिवर बोले- 'इतनी देर दरवाजा क्यो नही खोला ? क्या कर रही थी तू अन्दर ?' महिला ने कहा- 'पतिदेव को भोजन करा रही थी। पतिदेव को देरी हो रही थी इसलिए नही खोला।'

ऋषिवर को ऐसा सुनकर क्रोध आ गया और कहने लगे- 'तेरा पति बड़ा या मै बड़ा ?' महिला ने कहा- 'ऋषिवर ! आपको ऐसा बोलना शोभा नहीं देता है।' ऋषि का क्रोध बढ़ता जा रहा था। वे बोले- 'तू जानती नही है कि मेरे पास कितनी शक्तियाँ है, उपलब्धियाँ है।' महिला- 'जानती हूॅ।'

ऋषि- 'क्या जानती है ?' महिला- 'ऋषिवर ! मै उस वृक्ष की चिड़िया नही हूँ जो ऐसे ही मर जाऊंगी।'

ऋषिवर को घोर आश्चर्य हुआ कि इसने यह कैसे जान लिया कि वह चिड़िया उस समय मरी थी। ऋषि ने क्रोध मे आकर तेजोशक्ति का प्रयोग कर दिया,

किन्तु उसका कोई असर नही हुआ। अपितु वह प्रयोग उनको स्वयं को परेशान करने लगा। यानी उन्ही पर असर होने लग गया।

ऋषिवर को महान् आश्चर्य हो रहा था कि यह देवी है या स्त्री ? वे उस महिला से पूछने लगे- 'तुमने ऐसी कौनसी साधना की है ?' महिला ने कहा- 'यह सब प्रताप तो अन्दर वैठे हुए पतिदेव का है। मेरे पति का नाम तुलाधर है। हमेशा अपने तराजू की डाडी को बरावर ही रखते है। इस प्रकार प्रामाणिकता से व्यापार करने से दुनिया मे इनकी वहुत ख्याति फैली है।'

'इसी के साथ यह मन की डाडी को भी बरावर रखने का भी निरन्तर प्रयत्न करते हैं। अत: मन भी इनका समभावी वन गया है। इनसे अप्रामाणिकता व असत्य तो एकदम दूर है। मैने स्वयं ने तो कुछ भी तपस्या नही की है, किन्तु उनके प्रताप से मै भी कुछ जानती हूॅं।'

ऋषिवर उस महिला के विचारो से बहुत प्रभावित हुए।

शुद्ध, सरल, सुलझे विचारो वाले व्यक्ति को स्वत: ही ऐसी शक्ति प्राप्त हो जाती है कि उसे स्वत: होने वाली वातो का व सामने वाले के भावों का पता लग जाता है। अत: व्यक्ति को सहज व सरल बनना चाहिये।

□□□

24. एक को ही याद करो

एक वार अकवर वादशाह ने किसी अलमस्त फकीर को पूछा- 'महात्मन् ! कभी हमे भी याद करते हो क्या ?' फकीर ने कहा- 'हाँ, याद तो तुम्हें भी करता हूॅं। किन्तु उस समय जिस समय खुदा को भूल जाता हूँ।'

अर्थात् खुदा जिसके दिल मे वसे हुए है, उसे इधर-उधर भागने की जरूरत नही है। जो व्यक्ति खुदा से दूर है, उसी की अनेक द्वारों पर भटकन शुरू होती है। वही व्यक्ति अनेक को याद करता है। एक को याद करने वाले को अनेक के पास जाने की जरूरत नही होती।

□□□

25. समझौता करना सीखें

एक गाँव मे दो व्यक्ति रहते थे। एक का नाम राम था व दूसरे का नाम सोहन। एक गरीव था तो दूसरा धनवान। दोनो के विचार भिन्न-भिन्न थे। दोनों मे एक बार किसी बात को लेकर लड़ाई हो गई थी। दोनो आपस मे बोलते भी नही थे।

एक बार निर्धन राम को किसी अपराध के कारण पुलिस ने कारागृह में डाल दिया। कुछ दिनों बाद धनवान सोहन को भी व्यापारिक अपराध के कारण कारागृह मे जाना पड़ा।

पुराने जमाने मे एक काष्ठ का खोड़ा होता था। उस खोड़े मे दो बड़े खड्डे होते थे। जिस खोड़े मे राम का पाँव था, उसका दूसरा खड्डा खाली था। संयोगवश सोहन का पाँव उस दूसरे खड्डे मे डाल दिया गया।

सोहन धनवान था। अतः उसके घर से खाना तैयार हो करके आता था। जबकि राम कारागृह मे ही जैसा भी खाना मिल जाता, वह खा लेता था। सोहन अपने घर से आया भोजन अकेला ही खा जाता था। भोजन ज्यादा होने पर भी कभी राम को नही कहता कि थोड़ा यह भोजन कर लो या सब्जी-अचार, कुछ ले लो।

एक बार राम को जेल का भोजन बिल्कुल गले नही उतर रहा था। अतः विवश होकर सोहन से भोजन मॉग लिया कि थोड़ा सा दे दो। किन्तु धन के घमंड मे सोहन ने साफ इन्कार कर दिया। सोहन ने यह भी नही सोचा हम एक खोड़े मे है। एक-दूसरे के बिना दोनो का काम चल नही सकता।

दूसरे दिन सोहन को जगल जाना था, अतः राम से कहा कि तुम मेरे साथ चलो। राम ने मना कर दिया- 'मै तो नही चलता। मैने तो नही के बराबर खाया था। अतः मुझे तो जाने की जरूरत है ही नहीं।'

इस प्रकार राम हर काम मे मना करने लगा। सोहन को आखिर तंग आकर के राम से समझौता करना ही पड़ा और जब तक कारागृह मे साथ-साथ रहे, तब तक आधा भोजन देने का वादा कर लिया।

समझौता करने पर शेष समय आराम से बीता। इस प्रकार व्यक्ति को हर क्षेत्र मे यथायोग्य रूप से समझौता करके चलना चाहिए।

❑❑❑

26. भक्तों की सूची

एक बार नारदजी भगवान विष्णु के पास पहुँचे। भगवान को किसी काम मे व्यस्त देखकर बोले- 'आप अभी क्या कर रहे हैं ?' भगवान ने बताया- मैं अभी अपने भक्तो की सूची बना रहा हूँ। नारदजी ने पूछा- 'भगवन् ! सूची में पहला नम्बर किसका है ?' भगवान ने कहा- 'नारद ! पहला नम्बर तुम्हारा नहीं है।' देवर्षि नारद को बहुत दु:ख हुआ।

भगवान ने नारद के समाधान के लिये एक प्रयोग किया। उन्होने नारदजी से कहा- 'मुझे अतिशीघ्र मनुष्य के हृदय की जरूरत है। क्या तुम उसे ला सकते हो ?' नारद ने कहा- 'हॉ, क्यों नही ? अभी लाता हूँ।' कहते हुए शीघ्रता से नारदजी मनुष्य लोक में गए। चारों तरफ गॉव, नगर, घर-घर घूमे। पर कोई भी अपना हृदय देने के लिए तैयार नही था। घूमते-घूमते जंगल मे से नारदजी जा रहे थे। एक आदिवासी मिला। उससे नारदजी से पूछा- 'आप इतने चिंतामग्न क्यो है ?' नारद ने अपनी चिता व्यक्त की कि 'भगवान को मानव का हृदय चाहिये, वह मिल नहीं रहा है।'

उस आदिवासी ने तुरन्त अपना हृदय निकालकर दे दिया। नारदजी वहाँ से खुशी-खुशी विष्णु भगवान को हृदय देने गए। विष्णु ने कहा- 'नारद ! कितनी देर से आये हो ? मुझे तो उसी समय चाहिये था।

नारद- 'मै जब से यहॉ से गया था, निरन्तर कोशिश कर रहा था मानव हृदय को पाने की, पर सभी ने मना कर दिया। सिर्फ एक भील, जो कि जगल में मिला, उसने अपना हृदय सहर्ष दिया। उसे ही मै लेकर आ रहा हूँ।'

विष्णु भगवान बोले- 'बस उसी भक्त का नाम भक्तो की सूची में प्रथम नंबर पर है।' विष्णुजी ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा- 'तुम सोच रहे होगे कि अनन्य तो मै हूँ। किन्तु जिस समय मैने मानव-हृदय माँगा था, क्या तुम्हारे पास हृदय था ? क्या तुम अपना हृदय नहीं दे सकते थे ?'

नारदजी को अपनी भूल समझ मे आ गई और यह भी समझ आ गया कि सच्ची भक्ति किसे कहते है ?

सच्ची भक्ति उसी की होती है जो सर्वतोभावेन हर परिस्थिति मे अपने इष्ट के प्रति समर्पित रहता है। जो भक्त ऊपर से तो बहुत भक्ति करता है और उसके अन्तरग में स्वार्थ टकरा रहे हों, उसकी भक्ति कभी भी सच्ची नहीं हो सकती। उसे भक्ति का सही प्रतिफल भी नहीं मिल सकता।

❑❑❑

27. यह भी नहीं रहेगा

एक राज्य मे वहाँ महारानी बहुत धर्मनिष्ठ थी। वह अपने राजकुमार को हमेशा वैराग्य की ही शिक्षा देती। राजा भी सुनता था। राजा ने रानी को कहा- 'अपने एक ही तो बेटा है। अगर दीक्षा ले ली तो सिहासन पर कौन वैठेगा ?' महारानी ने कहा- 'ठीक है।' फिर भी राजकुमार की चिन्ता महारानी को थी। सोचा- 'कही यह पुत्र बडा होकर संसार के पाप कार्यो मे ज्यादा न उलझ जाये, इसके लिए एक परची मे कुछ लिखकर उसे मादलिये मे डाला और राजकुमार के गले मे पहना दिया। कुछ समय बाद वह स्वयं मृत्यु को प्राप्त हो गई। राजकुमार को राज्यतिलक दे दिया गया।

राजकुमार का ध्यान राज्य के कार्यो की तरफ कम रहता था। वह तो सुखो मे ही ज्यादा मस्त रहने वाला था। अन्तःपुर मे ज्यादा समय तक रहना, मौज-शौक करना, आराम से रहना। राज्य धर्म से वह एकदम परे हो गया। कर्त्तव्य से दूर हो गया। ऐसी स्थिति मे सभी कर्मचारी अपनी-अपनी मनमानी करने लगे। राज्य अस्त-व्यस्त चलने लगा। पड़ौसी देश के राजा को इस राज्य की स्थिति ज्ञात हुई तो उसने राजा को निष्क्रिय देखकर अनायास ही चढ़ाई कर दी। तब सम्राट की नीद उड़ी। सेना तैयार थी नही, अतः राजा गुप्त रास्ते से जंगल मे चला गया। जनता भी जिसको जो रास्ता मिला, इधर-उधर भाग गई।

राजा जगल मे पहुँचकर थकान को दूर करने के लिए एक वृक्ष के नीचे बैठा। वहाँ उसे अपनी पिछली गलतियाँ याद आने लगी। पश्चात्ताप करने लगा। वर्तमान का दुःख भी उससे बिल्कुल सहन नही हो रहा था। वह जोर-जोर से रोने लगा। छाती-माथा कूटने लगा। ऐसा करते हुए उसका मन गले मे रहे हुए डोरे की तरफ अटका और डोरा टूटा। मादलिया हाथ मे आ गया। उसने मादलिये को खोला तो एक छोटा-सा कागज उसमे था। उस कागज को बाहर निकालकर पढ़ा। उसमे लिखा था, 'यह भी नही रहेगा।' यह वाक्य पढकर उसे वड़ा सतोष मिला। सोचा- 'यह मेरे दुःख की अवस्था ज्यादा समय तक रहने वाली नही है।' दुःख के समय जरा-सा उपदेश भी आश्वासन का काम कर जाता है। पढ़ते ही उसका रोना बन्द हो गया। राजा वहाँ से उठ गया। सोचा, इस समय कही जाना चाहिये। यहाँ बैठे-वैठे तो कुछ भी नही होना है। अतः वह अपने बचपन के मित्र के पास गया। मित्र भी राजा था। दोनो आपस मे बड़े सौहार्द्र भाव से मिले। मित्र ने उसकी भिखारी सी अवस्था देखी। अतः चार दिन तो सामान्य बाते ही अपने आगत मित्र से की ताकि उसके दिल मे कोई विचार पैदा नही हो। चार दिनो के बाद राजा ने अपने आगत मित्र से पूछा- 'कैसे क्या

26. भक्तों की सूची

एक बार नारदजी भगवान विष्णु के पास पहुँचे। भगवान को किसी काम मे व्यस्त देखकर बोले- 'आप अभी क्या कर रहे हैं ?' भगवान ने बताया- मैं अभी अपने भक्तो की सूची बना रहा हूॅ। नारदजी ने पूछा- 'भगवन् ! सूची मे पहला नम्बर किसका है ?' भगवान ने कहा- 'नारद ! पहला नम्बर तुम्हारा नहीं है।' देवर्षि नारद को बहुत दु:ख हुआ।

भगवान ने नारद के समाधान के लिये एक प्रयोग किया। उन्होने नारदजी से कहा- 'मुझे अतिशीघ्र मनुष्य के हृदय की जरूरत है। क्या तुम उसे ला सकते हो ?' नारद ने कहा- 'हॉ, क्यो नही ? अभी लाता हूॅ।' कहते हुए शीघ्रता से नारदजी मनुष्य लोक मे गए। चारों तरफ गाँव, नगर, घर-घर घूमे। पर कोई भी अपना हृदय देने के लिए तैयार नहीं था। घूमते-घूमते जंगल मे से नारदजी जा रहे थे। एक आदिवासी मिला। उससे नारदजी से पूछा- 'आप इतने चिंतामग्न क्यों है ?' नारद ने अपनी चिता व्यक्त की कि 'भगवान को मानव का हृदय चाहिये, वह मिल नहीं रहा है।'

उस आदिवासी ने तुरन्त अपना हृदय निकालकर दे दिया। नारदजी वहॉ से खुशी-खुशी विष्णु भगवान को हृदय देने गए। विष्णु ने कहा- 'नारद ! कितनी देर से आये हो ? मुझे तो उसी समय चाहिये था।

नारद- 'मै जब से यहॉ से गया था, निरन्तर कोशिश कर रहा था मानव हृदय को पाने की, पर सभी ने मना कर दिया। सिर्फ एक भील, जो कि जंगल मे मिला, उसने अपना हृदय सहर्ष दिया। उसे ही मैं लेकर आ रहा हूँ।'

विष्णु भगवान बोले- 'बस उसी भक्त का नाम भक्तो की सूची मे प्रथम नंबर पर है।' विष्णुजी ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा- 'तुम सोच रहे होगे कि अनन्य भक्त तो मैं हूॅ। किन्तु जिस समय मैने मानव-हृदय माँगा था, क्या तुम्हारे पास हृदय नहीं था ? क्या तुम अपना हृदय नही दे सकते थे ?'

नारदजी को अपनी भूल समझ में आ गई और यह भी समझ आ गया कि सच्ची भक्ति किसे कहते है ?

सच्ची भक्ति उसी की होती है जो सर्वतोभावेन हर परिस्थिति मे अपने इष्ट के प्रति समर्पित रहता है। जो भक्त ऊपर से तो बहुत भक्ति करता है और उसके अन्तरग में स्वार्थ टकरा रहे हो, उसकी भक्ति कभी भी सच्ची नही हो सकती। उसे भक्ति का सही प्रतिफल भी नहीं मिल सकता।

❑❑❑

27. यह भी नहीं रहेगा

एक राज्य मे वहाँ महारानी बहुत धर्मनिष्ठ थी। वह अपने राजकुमार को हमेशा वैराग्य की ही शिक्षा देती। राजा भी सुनता था। राजा ने रानी को कहा- 'अपने एक ही तो बेटा है। अगर दीक्षा ले ली तो सिहासन पर कौन बैठेगा ?' महारानी ने कहा- 'ठीक है।' फिर भी राजकुमार की चिन्ता महारानी को थी। सोचा- 'कही यह पुत्र बड़ा होकर संसार के पाप कार्यो मे ज्यादा न उलझ जाये, इसके लिए एक परची मे कुछ लिखकर उसे मादलिये मे डाला और राजकुमार के गले मे पहना दिया। कुछ समय बाद वह स्वय मृत्यु को प्राप्त हो गई। राजकुमार को राज्यतिलक दे दिया गया।

राजकुमार का ध्यान राज्य के कार्यो की तरफ कम रहता था। वह तो सुखो मे ही ज्यादा मस्त रहने वाला था। अन्तःपुर मे ज्यादा समय तक रहना, मौज-शौक करना, आराम से रहना। राज्य धर्म से वह एकदम परे हो गया। कर्त्तव्य से दूर हो गया। ऐसी स्थिति मे सभी कर्मचारी अपनी-अपनी मनमानी करने लगे। राज्य अस्त-व्यस्त चलने लगा। पड़ौसी देश के राजा को इस राज्य की स्थिति ज्ञात हुई तो उसने राजा को निष्क्रिय देखकर अनायास ही चढ़ाई कर दी। तब सम्राट की नीद उड़ी। सेना तैयार थी नही, अतः राजा गुप्त रास्ते से जगल मे चला गया। जनता भी जिसको जो रास्ता मिला, इधर-उधर भाग गई।

राजा जंगल मे पहुँचकर थकान को दूर करने के लिए एक वृक्ष के नीचे बैठा। वहाँ उसे अपनी पिछली गलतियाँ याद आने लगी। पश्चात्ताप करने लगा। वर्तमान का दुःख भी उससे बिल्कुल सहन नही हो रहा था। वह जोर-जोर से रोने लगा। छाती-माथा कूटने लगा। ऐसा करते हुए उसका मन गले मे रहे हुए डोरे की तरफ अटका और डोरा टूटा। मादलिया हाथ मे आ गया। उसने मादलिये को खोला तो एक छोटा-सा कागज उसमे था। उस कागज को बाहर निकालकर पढ़ा। उसमे लिखा था, 'यह भी नही रहेगा।' यह वाक्य पढ़कर उसे बड़ा सतोष मिला। सोचा- 'यह मेरे दुःख की अवस्था ज्यादा समय तक रहने वाली नही है।' दुःख के समय जरा-सा उपदेश भी आश्वासन का काम कर जाता है। पढ़ते ही उसका रोना बन्द हो गया। राजा वहाँ से उठ गया। सोचा, इस समय कही जाना चाहिये। यहाँ बैठे-बैठे तो कुछ भी नही होना है। अतः वह अपने बचपन के मित्र के पास गया। मित्र भी राजा था। दोनो आपस में बड़े सौहार्द्र भाव से मिले। मित्र ने उसकी भिखारी सी अवस्था देखी। अतः चार दिन तो सामान्य बाते ही अपने आगत मित्र से की ताकि उसके दिल मे कोई विचार पैदा नही हो। चार दिनो के बाद राजा ने अपने आगत मित्र से पूछा- 'कैसे क्या

हुआ ?' उसने अपनी सारी बात यथावत अपने मित्र को बता दी।

राजा ने अपने मित्र को पूरा सहयोग किया। सेना तैयार करके उसके पूर्व राज्य पर चढ़ाई कर दी और वहाँ के राजा को हटाकर अपने मित्र को पुनः राज्य दिलवा दिया। अपना काम पूरा कर वह राजा अपने राज्य में चला गया।

एक बार राजा अपने राज्य में सुखपूर्वक बैठा था। प्रधानमंत्री व मित्र आदि सभी वहीं बैठे थे। सभी के सामने कहा- 'मै कितना पुण्यवान हूँ कि गये राज्य को फिर से प्राप्त कर लिया। बोलो प्रधानजी ! मैने उस राज्य को कैसे प्राप्त किया है ? क्या आपको पता है ?' प्रधानमत्री ने कहा- 'राजन् आप ही बताईये।' राजा- 'मैंने अपना राज्य पुनः कैसे प्राप्त किया ? इसके पीछे तो एक चमत्कारिक घटना हुई है।' राजा ने मादलिये वाली सारी घटना बता दी और कहा- 'यह भी नहीं रहेगा' इस एक छोटे वाक्य से मुझे एक नई शक्ति मिली थी। मै उसी समय आश्वस्त हो गया था कि यह दुःख अब ज्यादा समय रहने वाला नहीं है और कुछ दिनों मे मित्र राजा के सहयोग से राज्य भी प्राप्त कर लिया।'

प्रधानमंत्री- 'राजन्! आपने उस समय तो उस वाक्य का अर्थ किया था कि दुःख टिकने वाला नहीं है। यह अर्थ उस समय तक तो ठीक था, किन्तु मान लीजिये अभी इस मादलिये को खोलकर वही वाक्य पढ़ा जाये तो वर्तमान में उस वाक्य का क्या अर्थ करोगे ? यह भी नहीं रहेगा अर्थात् सुख का समय भी जाने वाला है। यह समय भी स्थाई रहने वाला नहीं है।

राजा ने सत्य तत्त्व को समझा और वैराग्य को प्राप्त कर अवसर पाते ही दीक्षित हो गये। इसी प्रकार आज भी व्यक्ति को अपने घर मे, दुकान मे, डायरी मे, बहियों में ऐसे ही सुवाक्य लिखने चाहिये। सुवाक्य जिन्दगी के हर मोड़ पर व्यक्ति को सहयोग करता है।

□□□

28. सोचकर बोलें

चुनाव का समय चल रहा था। उस समय एक गाँव में कई लोगों से घिरे नेता जी आये और जनता के बीच भाषण देने लगे। कहने लगे- 'आप मुझे जिता देगे तो मै आप नगरवासियों की जो भी माँग होगी, वह पूरी कर दूँगा।'

तभी सभा में से आवाज आई कि हमारे यहाँ पानी की बहुत समस्या है।

अभी तक नलो की कोई व्यवस्था नही है। नेताजी ने कहा- 'बस मुझे जिताने की देर है। आपके घर-घर मे नल लगवा दूँगा।'

तभी दूसरे व्यक्ति ने कहा- 'हमारे यहॉ लाईट की व्यवस्था नही है।'

नेताजी ने कहा- 'बस मुझे सीट पर आने दो। घर-घर लाईट लगवा दूँगा।'

तभी तीसरा व्यक्ति खड़ा होकर बोलता है- 'हमारे यहॉ श्मशान बना हुआ नही है। अतः हममे बहुत दिक्कत पैदा होती है।' नेताजी ने तुरन्त जवाद दिया- 'हॉ, हॉ.. मे जरूर घर-घर मे श्मशान बना दूँगा।'

सारे सभासद हँस पड़े। व्यक्ति को हर समय सोच समझकर, संभलकर बोलना चाहिये।

□□□

29. काश मैं राजा न होता

कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य देवलोक गमन कर गये। उस समय गुर्जरेश्वर महाराज कुमारपाल बहुत रो रहे थे। मत्री सम्राट को रोते हुए देख उनके पास पहुँचा और कहने लगा- 'यद्यपि आपके ज्ञानदाता गुरु का देहावसान हो गया है। यह ठीक है, पर राजन् ! आप इतने ज्ञानवान है। आप स्वय भी यह कहते रहते है कि यह शरीर अनित्य है, नाशवान है, क्षणभगुर है; फिर आप इस प्रकार आर्त्तध्यान करते हुए दुःखी क्यो हो रहे है ? राजन् ! आप ही यदि इस प्रकार धैर्य खो देगे तो हम सामान्य लोगो का क्या होगा ?'

राजा कुमारपाल बोले- 'मन्त्रिवर ! मै गुरुदेव के देवलोक होने की वजह से नही, अपितु मै अपने दुर्भाग्य पर रो रहा हूँ।'

'तुम जानते हो कि जैन मुनिवर राजमहलो मे गोचरी करने नही आते। मैं दुर्भागी राजा बनकर उत्पन्न हुआ, जिससे मेरे यहॉ आचार्य भगवन् गोचरी के लिए नहीं पधार सके। काश ! मै राजा नही होता तो ठीक रहता या राज्य त्याग कर देता तो भी ठीक रहता। वे आचार्य भगवन् कभी तो मेरे घर भिक्षार्थ पधारते और मै दान देकर धन्य बन जाता। मेरे भवो-भवो के कर्म कट जाते, मेरा जीवन सफल व धन्य-धन्य हो जाता; लेकिन दान नही दे पाने के पश्चात्ताप के वशीभूत आर्त्तध्यान हो रहा है।'

□□□

30. दूसरों को बदलने से पहले स्वयं बदलो

एक महिला अति वृद्ध होते हुए भी गरीबी के कारण एक घर में काम करने जाती थी। एक बार मालिक ने कहा– 'जाओ बाजार से एक पीपा आटा ले जाओ।' बुढ़िया आटा लेकर बाजार से बड़ी मुश्किल से आ रही थी। उसकी गर्दन टेढ़ी हो रही थी। चला नहीं जा रहा था। अतः रास्ते मे एक वृक्ष के पास सिर से पीपा उतार कर बैठ गई और रोने लग गई। आज उसे बहुत रोना आ रहा था। राहगीर भी बहुत आ जा रहे थे। राहगीरो की दृष्टि बुढ़िया के आँसुओ पर पड़ भी रही थी, पर किसी के पास समय नही बुढ़िया से कुछ पूछने व करने के लिए। कहा भी है–

किस–किस को पूछिये, किस–किस को रोइये।
आराम बड़ी चीज है, मुंह ढककर सोइये।

सभी अपने–अपने लक्ष्य की ओर शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़ते हुए चले जा रहे थे।

एक भाई उसी समय बुढ़िया के पास आया और मीठे स्वर मे पूछने लगा– 'माँ जी, क्यो रो रही हैं ? क्या बात है ?' माँ जी ने उन शब्दो को सुना और सोचने लगी कि आज कौन देवपुरुष बोल रहा है। रोते हुए आँखें खोलकर सामने देखा तो एक पुरुष खड़ा है और पूछ रहा है, क्यों रो रही हो ? बुढ़िया– 'तुम देख ही रहे हो कि मै कितनी वृद्ध हो चुकी हूँ। फिर भी इस पापी पेट के पीछे मै एक घर में काम करती हूँ। काम करते–करते जरा–सी भी देर हो जाती है तो कभी–कभी गालियाँ व कोड़े भी खाने पड़ते है। अब तुम ही बताओ। ऐसी अवस्था मे मेरे पास रोने के अलावा और बचा ही क्या है ? खुदा भी तो मेरी नही सुनता।'

वह भाई बोला– 'माँ जी, ऐसी बात नहीं है। खुदा का ध्यान सभी पर समान रूप से है। चलो, मै तुम्हारे इस आटे के पीपे को यथास्थान पहुँचाकर आता हूँ।'

बुढ़िया को ऐसा लग रहा था, जैसे साक्षात भगवान मिल गए हो। वह भाई सिर पर वजन उठाकर बुढ़िया के साथ चला जा रहा था।

जैसे ही मालिक के घर में बुढ़िया तथा उस भाई ने प्रवेश किया, मालिक की दृष्टि उस अजनबी पर पड़ी। मालिक ने कहा– 'यह क्या ? स्वय हजरत मुहम्मद पैगम्बर आए हैं।'

मालिक दौड़कर सामने आया। शीघ्रता से सिर पर से वजन उतारा। चरणो मे सिर टेककर अपने कृत्य की माफी मॉगने लगा और तत्काल प्रतिज्ञा कर ली कि आगे से मै किसी भी नौकर के साथ ऐसा कटु व्यवहार नहीं करूंगा।

मुहम्मद साहब के ऐसे व्यवहारिक जीवन प्रसंग को देखकर उस व्यक्ति का जीवन भी बिल्कुल बदल गया।'कटु से मृदु बन गया। गाँव वाले भी तब से उसकी प्रशसा करने लगे।

❑❑❑

31. सही अर्थ

एक सेठ-सेठानी थे। उनके एक ही लाडला बेटा था। वह लाड-प्यार में मूर्ख जैसा ही रह गया। सेठ ने अपना अन्तिम समय नजदीक जानकर पुत्र को पास मे बुलाया और उसे शिक्षा दी कि, 'बेटा ! अब मेरे जाने का समय आ रहा है। अतः कुछ बाते जाते-जाते तुम्हे बता देना चाहता हूँ।'

पहली बात है- तुम हमेशा मीठा भोजन करना।

दूसरी बात है- पैसा उधार देकर ठगाई मत करना।

तीसरी बात- धूप मे दुकान पर मत जाना।

चौथी बात- पैसे की जरूरत हो तो गंगा किनारे खोदना। अगर कुछ समझ मे नही आये तो मेरे मित्र माणक से पूछ लेना।

बेटे ने कहा- 'ठीक है पिताजी!'

इतनी बात पूरी होते ही पिताजी मृत्यु को प्राप्त हो गये। बेटे को चारो बातें याद थी। अतः उसने चारो बातों का पालन करना प्रारंभ कर दिया।

1. वह हमेशा खीर आदि मीठा भोजन ही करता।
2. रुपये सभी को उधार देता, किन्तु पुनः मॉगता नही।
3. घर से दुकान तक पर्दे बधवा दिये। अतः धूप मे जाना ही नही पड़े।
4. धन की कमी होने पर गंगा नदी के किनारे खोदा। मिला कुछ नही।

वह श्रेष्ठी पुत्र बहुत दुःखी हुआ और पिता के कहे अनुसार पितृमित्र के पास पहुँचा और उनके सामने अपनी सारी समस्या कही। तब पितृमित्र ने कहा- 'बेटे ! तेरे पिता ने तुझको जो चार बाते बताई है, वे बहुत उपयोगी है। किन्तु तुम उनका सही अर्थ समझ नही पाये। उन चारो बातो का रहस्य निम्न प्रकार से है-

तेरे पिता ने कहा कि मीठा भोजन करना अर्थात् जब तेज भूख लगे तभी खाना ताकि भूख मे खाई जाने वाली वस्तु कैसी भी हो, वह मीठी ही लगेगी। बिना

भूख लगे खाने से पाचन क्रिया भी कमजोर होती है तथा अन्य अनेक बीमारियाँ खड़ी हो जाती है। शरीर में पूरे समय सुस्ती लगने लगती है। अतः भूख लगने पर ही खाना।

दूसरी बात तेरे पिता ने कही कि गहना रखकर ही किसी को पैसा देना। ताकि उगाई करने के लिए उनके घरो के बार-बार चक्कर काटना न पड़े। पैसा देने वाला स्वयं ही आयेगा और गहना छुड़ाकर पैसे दे जायेगा।

तीसरी बात तेरे पिता ने कही कि छाया में ही दुकान पर आना-जाना अर्थात् सवेरे धूप निकलने से पहले जल्दी दुकान पर जाना और शाम को धूप खत्म हो जाने के बाद ही घर पर आना। दुकान पर टिककर बैठोगे तो कमाई भी हो जायेगी। नही तो बार-बार घर पर आने-जाने में कमाई ठप्प हो जायेगी। किन्तु तुमने तो पर्दे बांध दिये। नासमझी के कारण कितना खर्च कर डाला। अब आगे से ध्यान रखना।

धन चाहिये तो गंगा किनारे खोदना। ऐसा जो तेरे पिता ने कहा है। उनका अर्थ यह नहीं कि तुम गंगा नदी के पास जाकर खोदना; किन्तु इसका अर्थ है कि गंगा नाम की गाय का जहाँ खूंटा है, वहाँ खोदना।

उस लड़के ने कहा- 'अब मुझे सबकुछ सही-सही समझ में आ गया है। इतने दिन मै अपनी मनमानी करके उसका अर्थ करके काम कर रहा था। अब आगे से ऐसा नहीं करूंगा। पिताजी ने मेरे हित के लिए अति महत्वपूर्ण बाते बता दी और यह भी बता दिया कि मेरे मित्र से पूछ लेना, फिर भी मैने ध्यान नही दिया। अब आगे से सारे काम पिता के द्वारा बताये अनुसार ही करूंगा।

इस प्रकार शब्द का अर्थ समझे बिना अनर्थ भी हो सकता है। अतः पढ़ने के साथ-साथ अर्थ भी समझना जरूरी है। उसमें भी अर्थ के सारतत्व को समझना आवश्यक है। निरे शाब्दिक अर्थ से भी काम नही बनेगा।

भारतीय मनीषा की सम्पूर्ण विश्व मे अपनी अलग पहचान है। जिन रहस्यो को आज से पहले सामान्य जन रहस्य या परलौकिकता मानते रहे, आज के युग मे जीवन के उन्ही महत्त्वपूर्ण रहस्यों को सतजन समझा रहे है।

□□□

32. जो थने कहग्यो, सो मने कहग्यो

जिस प्रकार फूल से निकलने वाले सुगन्धित पुद्गल नाक मे जाकर उसे सुगध का अनुभव कराते हैं, उसी प्रकार मानसिक सोच से भी मनोवर्गणा के पुद्गल तैयार होते है और वे सम्बन्धित मन के पास जाकर उसे प्रभावित किये बिना नही रहते।

एक प्राचीन लोककथा सुनने को मिलती है कि एक बुढ़िया अपनी बेटी को ससुराल पहुँचाने पैदल ही जा रही थी। जेठ का महीना था, सूर्य तप रहा था। बुढ़िया के सिर पर बेटी के गहने व कपड़ो की पोटली रखी थी। पोटली के भार से उसकी गर्दन टेढ़ी हो रही थी। पसीना हो रहा था। उनके पैर जल रहे थे, फिर भी चले जा रही थी माँ-बेटी दोनो। इतने मे एक ऊट वाला पीछे से आया, जो अपने ऊट पर अकेला ही बैठा था और कोई सामान भी नही था। उसे देखकर बुढ़िया ने कहा - वीरा ! तुम्हारा ऊंट खाली जा रहा है। मेरा जरा एक काम कर दो। मेरी बेटी का ससुराल अगले ही गाँव मे रास्ते पर ही आएगा। पीले रग का पक्का मकान है। बेटी के ससुर का नाम खुमानसिह है। उन्हे यह पोटली दे देना और कहना कि उनकी बहू को लेकर उसकी माँ आ रही है।

ऊँट वाला कुछ तुनक-मिजाजी था। वह बोला- 'मेरा ऊट कोई चलते राहगीरो के सामान उठाने के लिए नही है। खाली ऊट है तो क्या हुआ ? तुम्हे सामान उठवाना है तो ऊट किराये पर लो।' यो कहते हुआ ऊट वाला आगे बढ़ गया। कुछ दूर जाने के बाद उसके मन मे विचार आया कि वह बुढ़िया मुझे जानती नही और न ही मै उसे जानता हूँ। जिन्दगी मे वह कभी मुझ से मिली नही। फिर भी वह मुझे अपनी बेटी के गहने व कपड़े दे रही थी। मै वह पोटली ले लेता और उसके ससुराल न देकर भाग जाता, तो वह मेरा क्या बिगाड़ लेती। वाकई वह मेरा कुछ नही कर पाती। इतना धन मेरे हाथ लग जाता। जिन्दगीभर आराम से बैठे-बैठे खाता। खैर अभी क्या हुआ। बुढ़िया तो पीछे आ रही है। क्यो न अब भी पोटली लू और लेकर भाग जाऊ। यह सब सोचकर ऊट वाले ने ऊट खड़ा कर दिया और बुढ़िया की प्रतीक्षा करने लगा।

इधर बुढ़िया के मन मे भी विचार आने लगा कि मेरी बुद्धि भी कहाँ मारी गई, जरा से बोझ के पीछे मै अपनी बेटी के गहने व कपड़े उसे दे रही थी। यह तो भला हो ऊंट वाले का कि उसने मना कर दिया। यदि वह पोटली लेकर भाग जाता तो मै किसको पकड़ती। फिर बेटी को इतने गहने व कपड़े कहाँ से लाकर देती। इस प्रकार सोचती-सोचती बुढ़िया आगे बढ़ रही थी।

रास्ते मे ही उसे वही ऊंट वाला मिला। इस बार वह अपनी वाणी मे मिश्री सी मधुरता घोलता हुआ बोला- 'सुन माँ जी ! यद्यपि मैंने तुम्हारी पोटली लेने से इन्कार तो कर दिया, पर आगे जाने पर मेरे मन में दया आ गई। सोचा माँ जी को कष्ट हो रहा है। मेरा ऊंट तो वैसे ही जा रहा है। क्यों न पोटली लेकर उसके कष्ट को दूर कर थोड़ा सेवा का लाभ ले लूं। लाओ, पोटली मुझे दे दो। मै पहुँचा दूगा।'

माँ जी ने कहा- 'नहीं बेटा, नहीं। अब तो मै ही पहुँचा दूंगी।

ऊंट वाला बोला- 'नही माँजी ! गर्मी बहुत पड़ रही है, तुम मुझे पोटली दे दो। मै पहुँचा दूंगा।

अब ऊंट वाला पोटली लेने को तैयार है तो माँ जी पोटली देने को तैयार नहीं है; क्योंकि दोनों के मन मे परिवर्तन आ चुका है।

ऊंट वाले के ज्यादा आग्रह करने पर माँ जी ने कहा- 'बेटा अब नहीं। पहले तेरा दिल भी साफ था और मेरा दिल भी साफ था। इसलिए मैं पोटली देने को तैयार थी और तुम लेने को तैयार नही हुए। अब तेरे दिल में पाप आ गया है, तुम मेरी पोटली उड़ाना चाहते तो मेरे दिल मे भी यह विचार आ गया है कि यह पोटली उठाकर भाग जायेगा। जो थने कहग्यो सो मने कहग्यो, इसलिए अब मैं पोटली देने वाली नही।

ऊटवाला मुँह लटका कर आगे बढ़ गया।

यदि हमारे विचार सामने वाले के प्रति बुरे होगे तो उसके मन मे भी हमारे प्रति वैचारिक वैमनस्य आए बिना नही रह सकेगा। अतः मन की शुद्धि रखना भी आवश्यक है। मन के शुद्ध होने पर ही वचन और काय की शुद्धि भी सही रूप मे रह सकेगी। मान्यवरो ! मन वचन और काय की शुद्धि पर ही आत्मशुद्धि अवलम्बित है।

□□□

33. परहित में निजहित

सुरमिरपुर गॉव में भोलाराम नाम का एक लड़का अपनी माँ चम्पा के साथ रहा करता था। गरीबी के कारण गुजर-बसर बड़ी मुश्किल से हो रहा था। मॉ ने बड़ी मेहनत करके बच्चे को पाल-पोसकर बड़ा किया। लेकिन अब माँ के तन मे इतनी शक्ति नहीं रही कि वह ऐसी कड़ी मेहनत कर सके और न ही भोलाराम मे कमाने

की योग्यता थी। आखिर घर खर्च कैसे चलाया जाये ? दोनो के सामने यह एक विकट समस्या थी।

भोलाराम ने किसी के मुख से सुना कि अपने गाँव से पूर्व दिशा मे 15 कोस जाने पर एक पहाड़ी आती है, जिस पर एक सिद्ध पुरुष रहते है। उन्हे जो लोग अपनी समस्याओ के बारे में पूछने जाते है उसका सही-सही जवाब देते हैं। भोला ने अपनी माँ से जाकर कहाँ- 'माँ ! मै उस सिद्ध पुरुष के पास जाना चाहता हूँ और उससे पूछूँगा कि हमारी गरीबी कैसे दूर हो।'

माँ ने बच्चे का आग्रह देखकर जाने की हाँ भर दी। रास्ते मे खाने के लिए भोजन बना दिया। भोला पैदल-पैदल रवाना हो गया। पाँच कोस चलने के बाद शाम हो गई। वह एक गाँव मे पहुँचा। गाँव के बीच मे एक हवेली थी। सोचा, रात यही बिताकर कल यहाँ से आगे जाना चाहिए। वह उस हवेली के अन्दर गया, मालकिन से मिला और रातभर ठहरने के लिए इच्छा दर्शायी।

पुराना जमाना था। लोग अतिथि को देव रूप समझकर रख लिया करते थे। सेठानी ने भी रख लिया। खाना खिलाने के बाद बातचीत के दौरान भोलाराम से सेठानी ने पूछा- 'कहाँ जा रहे हो ?' उसने कहा- 'सिद्ध पुरुष के पास गरीबी को मिटाने का उपाय पूछने जा रहा हूँ।

सेठानी ने कहा- 'मेरा भी एक काम करोगे ?' भोलाराम- 'बोलो, बोलो। जरूर करूगा। आपको क्या पूछना है।'

सेठानी- 'मेरी बेटी सर्वगुण सम्पन्न है, पर एक ही कमी है। उसे कुछ वर्षो से दिखता नही है। सिद्ध पुरुष को पूछकर आना कि उसकी आँखे ठीक हो जायेगी या नही ? यदि ठीक होगी तो कब तक होगी ?

भोलाराम ने कहा- 'ठीक है। आपके प्रश्न का जवाब भी पूछ लूँगा। रात बीती। सवेरे ही भोलाराम आगे बढ़ा। मध्यान्ह तक चलने के बाद एक गाँव के बाहर खेत किनारे विश्राम करने के लिए बैठा। भोलाराम को विश्राम करते देखकर खेत का मालिक भी विश्राम करने एवं खाना खाने के लिए आ बैठा। खेत मालिक किसान ने भोलाराम को भी आग्रह करके भोजन कराया और पूछा- 'कहाँ जा रहे हो।' तब उसने कहा- 'मै सिद्ध पुरुष के पास अपनी गरीबी मिटाने का उपाय पूछने जा रहा हूँ।' किसान ने कहा- 'भाई ! एक बात मेरी भी पूछ आना।' भोलाराम ने कहा- 'बोलो, क्या पूछना है ?' किसान ने कहा- 'मेरे खेत के किनारे अनार के पौधे है। काफी कोशिश करने के बाद भी वे बढ़ नही रहे है। जड़े फैल नही रही है, आखिर क्यो ?'

भोलाराम बोला- 'ठीक है। आपका भी प्रश्न पूछकर आऊंगा।'

भोलाराम आगे बढ़ा। दूसरे दिन सेवेरे सिद्ध पुरुष के निवास स्थल पहाड के नीचे तक पहुँच गया। वहाँ उसे एक सन्यासी बाबा मिले। उन्होंने पूछा- 'बच्चे ! कहाँ जा रहे हो ?'

भोलाराम- 'सिद्ध पुरुष के पास अपनी समस्या का समाधान पूछने।'

सन्यासी- 'एक मेरी भी समस्या है। वह पूछकर आना।'

भोलाराम- 'बोलो क्या समस्या है ?'

सन्यासी- 'मुझे सन्यास लिए 25 वर्ष हो गये है। पर सन्यास का आनन्द क्यो नहीं आ रहा है ? यह पूछकर आना।' भोलाराम ने कहा- 'ठीक है।'

भोला दोपहर तक पहाड़ पर चढ़ गया। उसे पर्वत के शिखर पर वह सिद्ध पुरुष वृक्ष की छॉव मे ध्यान करते हुए मिला। भोलाराम ने उसे प्रणाम किया। सिद्ध पुरुष ने आशीर्वाद दिया और आने का कारण पूछा। तब भोलाराम ने प्रथम मे अपनी गरीबी मिटाने का कारण पूछा, फिर सेठानी की लड़की की आँखों के विषय मे, किसान के अनार के पौधे के विषय मे और सन्यासी के सन्यास को लेकर प्रश्न पूछे। इस प्रकार उसके चार प्रश्न हो गए।

तब सिद्ध पुरुष ने कहा- 'सुनो भोलाराम ! एक बार में मैं तीन प्रश्नो के उत्तर ही देता हूँ। तुम चाहो तो कोई तीन प्रश्न पूछ सकते हो। एक प्रश्न तुम्हें छोड़ना होगा।'

भोलाराम विचार मे पड़ गया। वह सोचने लगा- 'क्या पूछूं और क्या छोडू। सेठानी की लड़की का प्रश्न छोडूं तो ठीक नहीं, क्योकि उसके घर में यहाँ पूछने के लिए आने वाला कोई व्यक्ति नही दिखता। किसान का प्रश्न छोडूं तो वह भी ठीक नही, क्योंकि वह बिचारा दिनभर खेत पर मेहनत करता है, उसे कहाँ समय कि वह यहाँ आकर पूछे और सन्यासी का प्रश्न तो छोड़ ही नही सकता, क्योकि सन्यासी की सेवा करना तो मेरा कर्त्तव्य है। कौनसा प्रश्न पूछना छोडू ? मेरा प्रश्न तो पूछने मै यहाँ आया ही हूँ, भारी ऊहापोह के बाद भी उसे समझ मे नही आ रहा था कि कौनसा ...न छोड़ा जाये। आखिर उसने निर्णय लिया कि मै अपना प्रश्न छोड़ देता हूँ। मेरे पास कोई काम नहीं। मैं अपनी बात फिर आकर भी पूछ सकता हूँ। मुझे क्या फर्क पडता है, दो दिन बाद सही; लेकिन इन तीनो के प्रश्न जरूर पूछ लेने चाहिए। सबकुछ सोचकर भोलाराम ने सिद्ध पुरुष से कहा कि 'आप मेरा प्रश्न छोड़कर बाकी तीन प्रश्नो के जवाब दे दीजिये।'

सिद्ध पुरुष बोला- 'अरे ! यह तुम क्या कह रहे हो ? तुम्हारा प्रश्न तो मुख्य

है, बाकी के प्रश्न तो गौण है। तुम तुम्हारा प्रश्न पूछने यहॉ आये हो तो तुम्हारा जवाब तो ले लो।'

भोलाराम बोला– 'नही महाराज ! मुझे तो उन तीनो के प्रश्न का जवाब चाहिये।' सिद्ध पुरुष ने कहा– 'फिर ठीक है। जैसी तेरी इच्छा। मै उन तीनो के जवाब दे देता हूॅं।'

'प्रथम प्रश्न का जवाब तो यह है कि उस सेठानी की लड़की की ज्योति तुम जब घर जाओगे तो अपने पास बुलाकर उसे कहना कि इधर देखो, इतने मात्र से उसके आँख की ज्योति आ जायेगी। उसे सब दिखने लग जायेगा।'

'किसान के प्रश्न का जवाब यह है कि जहॉ पर अनार के पौधे है, उसके नीचे चार हाथ खोदने पर स्वर्ण मुद्राओ के पांच कलश हैं, जिसके कारण अनार के पौधो की जड़े गहरी नीचे नही जा रही है। इसी कारण पौधे बढ़ नही पा रहे है। उन स्वर्ण कलशो को निकालने पर वृक्ष बढ़ने लगेगा।'

'तीसरे प्रश्न सन्यासी का जवाब यह है कि सन्यासी ने जटा मे सवा लाख मूल्य का हीरा छिपा रखा है। यद्यपि वह उसके काम नही आता है, लेकिन उस हीरे पर सन्यासी का मोह है। बार–बार उसका ध्यान हीरे पर जाता रहता है, जिससे निश्छलता के साथ वह योग क्रिया नहीं कर पा रहा है। जब तक वह हीरा उसके पास रहेगा, उसे सन्यास का आनन्द नही आएगा।'

इस प्रकार इन तीनो प्रश्नो का जवाब देकर सिद्ध पुरुष ध्यान मे लीन हो गये। भोलाराम ने प्रणाम किया और चल पड़ा अपने गतव्य की ओर। पहाड़ से नीचे उतरते ही सन्यासी मिला। उसने पूछा– 'मेरे प्रश्न का जवाब लाए हो ?'

भोलाराम ने कहा– 'हाँ, लाया हूॅं।'

'बताओ फिर।'

'सिद्ध पुरुष ने बतलाया है कि आपने शिखा (चोटी) मे एक बहुमूल्य रत्न छिपा रखा है, जिसके कारण आपका ध्यान विचलित रहता है। जब तक वह रत्न रहेगा, आपको साधना मे आनन्द नही आना है।'

सन्यासी को सुखद आश्चर्य हुआ, 'ओहो ! सच कहते हो तुम। हकीकत मे मेरा ध्यान बार–बार हीरे की तरफ जाए बीना नही रहता। यह मेरी चिन्ता का बहुत बड़ा कारण है।' सन्यासी ने उसी वक्त चोटी से हीरा निकाला और सोचा, 'यह तो मेरे किसी काम का नही, परन्तु इस भोलाराम का मेरे ऊपर बहुत उपकार है। इसने मेरी बहुत बड़ी समस्या का समाधान कर दिया। अतः यह हीरा मुझे इसे ही दे देना चाहिये।'

सन्यासी ने आग्रहपूर्वक वह हीरा भोलाराम को दे दिया। भोलाराम आगे बढ़ा। किसान के पास पहुँचा। किसान को भी अपनी समस्या का समाधान बतलाया। अनार के पौधों की जड़ों को खोदने पर पाँव स्वर्ण कलश निकले। किसान ने सोचा- 'यह स्वर्ण कलश भोलाराम की पुण्यवानी से मिले है। अतः ये स्वर्ण कलश इसे ही दे देने चाहिये।' किसान ने कहा- 'ये कलश तुम ले जाओ।' भोलाराम ने कहा- 'यह तुम्हारी सम्पत्ति है। तुम रखो। मै तो केवल तुम्हारे प्रश्न का जवाब लाया हूँ।' किसान बोला- 'लेकिन यह सम्पत्ति मिली तो तुम्हारे कारण है। अतः यह सम्पत्ति तुम्हारी हुई।' इस प्रकार दोनो एक-दूसरे को आग्रह करने लगे। अन्त मे आधी-आधी बाँट ली।

धन लेकर भोलाराम उस सेठानी के घर पहुँचा। सेठानी ने भी उसका सत्कार सम्मान किया और अपनी बेटी के आँख की ज्योति आने की बात पूछी। उसने कहा- 'आप बेटी को यहाँ बुलाईये।'

बेटी को बुलाया गया। उसके बाद भोलाराम ने उसे कहा- 'इधर देखो।' इतना कहते ही उसे दिखने लग गया। सेठानी बड़ी खुश हुई। कितना बड़ा चमत्कार हो गया। सेठानी ने सोचा- 'लड़की भी बड़ी हो गई है। सब गुण इसमे थे। केवल आँख से नही दिखता था, वह भी अब दिखने लगा है। विवाह के योग्य हो गई है।' भोलाराम के विषय में सोचा कि भोलाराम भले ही प्रकृति से भोला है। लेकिन पुण्यशाली अवश्य है। ऐसा भद्रिक पुण्यशाली है। ऐसा योग्य वर मेरी लड़की के लिये कहाँ मिलेगा ? मुझे इसी के साथ लड़की की शादी कर देनी चाहिये। सेठानी ने आग्रहपूर्वक अपनी लड़की की शादी भोलाराम से ठाठ-बाठ के साथ कर दी। खूब दहेज भी दिया।

अब भोलाराम अपनी पत्नी के साथ खूब साज-सज्जा के साथ अपने घर पहुँचा। उसकी माँ ने भी उसका खूब सम्मान किया। घर मे आने के बाद उसने माँ को सारी बात बताई और कहा कि मै अपने प्रश्न का जवाब तो नही पूछ सका। लेकिन उन तीनो का प्रश्न पूछ आया। इस बार जाऊंगा, तब अपने प्रश्न का जवाब पूछूगा। तब उसकी माता ने हँसते हुए कहा- 'भोलाराम ! अब अपने प्रश्न का जवाब पूछने की कहाँ जरूरत रही। जब हीरा, स्वर्णकलश, इतना धन मिल गया और तुम्हारी शादी ी हो गई है, तो दरिद्रता तो दूर हो ही गई।'

सच है, परहित मे ही निजहित निहित है। यदि भोलाराम उन तीनो प्रश्नो में से एक भी छोड़ देता, तो वह ही घाटे मे रहता।

□□□

34. डॉक्टर और वकील

एक बहुत बड़ा डॉक्टर था। जिसके यहॉ घर पर भी दिखाने के लिए रोगियो की काफी लम्बी लाईन लगी रहती थी। सभी को उस पर विश्वास था। वैसे तो शहर मे और भी बहुत डॉक्टर थे, पर मरीज उसके पास ज्यादा आया करते थे। जबकि डॉक्टर साहब की फीस घर पर दिखाने को भी 100 रुपये से कम नही थी। लेकिन डॉक्टर साहब जब भी किसी फक्शन, समारोह मे जाते थे, तो उन्हे देखकर समारोह मे आए अन्य अनेक लोग उनके पीछे पड़ जाते और अपनी-अपनी बीमारी का निदान पूछने लगते। क्योकि यहाँ पर पूछने से कोई पैसा लगने वाला नहीं था। डॉक्टर साहब इस प्रकार के मरीजो से काफी परेशान थे। वह जहॉ भी जाते, वहाँ लोक-लाज के कारण मरीजो को देखना पड़ता। उन्हे फक्शन का कोई मजा ही नही आता।

एक बार डॉक्टर साहब किसी फक्शन मे गए हुए थे। उसी फक्शन मे उनका एक वकील दोस्त भी आया हुआ था। वह भी उनके पास बैठा हुआ था। दोनो बातचीत कर रहे थे। इतने मे कुछ रोगी डॉक्टर साहब के पास आए और उन्हे देखने हेतु आग्रह करने लगे। डॉक्टर साहब को बहुत अटपटा लगा, लेकिन करे भी तो क्या ? आखिर बातचीत बन्द कर मरीजो को देखना पड़ा। आधे घण्टे के बाद जब उनसे छुट्टी मिली, तब अपने वकील दोस्त से बोले- 'यार ! क्या बताऊॅ ? इन रोगियो ने तो मेरी नाक मे दम कर रखा है। कभी घर व क्लीनिक के व्यस्त कार्यो से हटकर कुछ एंज्वाय करने के लिए किसी समारोह मे जाता हूॅ तो वहाँ पर भी ये लोग मुझे नही छोड़ते है। कुछ समझ मे नही आता कि इनसे कैसे बचा जाये ?'

वकील मित्र ने कहा- 'इनसे बचने का बड़ा आसान-सा तरीका है। जितने भी लोग आपको दिखाएं, उन्हे देख लीजिये। उनके नाम नोट करके समारोह के बाद उनके घर पर 100 रुपये का अपनी फीस का बिल भेज दीजिये। फिर कोई आपको जल्दी से फंक्शन मे दिखाने नही आएगा। इसके साथ ही मै वकील हूॅ आपको यह रास्ता सुझाया है, अतः 500 रुपये मेरी फीस भी मेरे घर भेज देना। लोग मुझे भी समारोह मे ऐसे प्रश्न पूछते रहते है, तो मैने भी यह व्यवस्था कर रखी है।

❑❑❑

35. सूर्यास्त तक तुम्हारा

यशोवर्धन ब्राह्मण पर खुश होकर सम्राट अजितसेन ने उसे वरदान दिला कि 'तुम राजभण्डार मे जाओ। सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक जितना धन तुम भण्डार से बाहर निकाल लोगे, वह तुम्हारा होगा।' यशोवर्धन बहुत खुश हुआ। उसकी खुशियाँ हृदय मे समा नहीं रही थीं। सूर्योदय के साथ ही यशोवर्धन राज भण्डार में घुस गया। राजभण्डार कोई छोटी-मोटी अलमारी नहीं थी, अपितु वह तो विशाल भूखण्ड के भूगर्म में बना हुआ था, जिसमे बहुत सारा सोना, चांदी, हीरे-जवारात आदि भरे पड़े थे।

यशोवर्धन ने जब इतना धन देखा तो उसी ऑखे चुँधिया गई। वह सोचने लगा- 'इतना धन। दिनभर में तो मै कितना ही धन उठा लूँगा। जो मेरा हो जायेगा।' उसने फिर सोचा- ऐसे कैसे धन को ले जाऊगा। कुछ बोरे लेकर आता हूँ। जिनमे भरकर धन ले जाने में सुविधा रहेगी।'

वह बाजार मे जाकर पचासों बोरे खरीदकर ले आया और भण्डार मे जाकर उन्हें भरने लगा। कितने ही बोरे सोने से भरे, कितने ही बोरे चाँदी से भरे, कितने ही हीरे-जवाहरात से भरे। इस प्रकार दिनभर बोरे भरता ही रहा। फिर भी भण्डार मे तो धन बेशुमार था। यशोवर्धन का मन नही भर रहा था। वह चाह रहा था कि जितना धन निकाल लूं, वह मेरा होगा। वह फिर बोरे भरता चला गया। धन के लोभ मे उसे ध्यान नही रहा और धन के बोरे भरते-भरते ही सूर्य अस्त हो गया। वह एक भी बोरा भण्डार से बाहर नहीं निकाल पाया। सूर्यास्त होते ही भण्डार का सुरक्षा दल आ गया। उन्होने उस यशोवर्धन ब्राह्मण को पकड़कर बाहर निकाल दिया। उसने बहुत चाहा धन ले जाना। पर नियम के अनुसार वह उसे बाहर नही ले जा सका। अब उसे पश्चात्ताप हो रहा है कि यदि एक बोरा भी बाहर ले गया होता तो वह भी काम आता। कुछ भी हाथ नहीं लगा। सब मेहनत बेकार गई।

अतः इन्सान को चाहिये कि वह इस सांसारिक दौलत से ऊपर उठकर आत्मसम्पदा को प्राप्त करने के लिए समय रहते ही पुरुषार्थ प्रारम्भ कर दे।

□□□

36. लोभ : मौत का पैगाम

सम्राट वीरसेन गांगुली तेली पर मेहरबान हो गया और उसे वरदान दे दिया कि तुम सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक दौड़ लगाकर उसी स्थान पर आ जाओगे उतनी जमीन तुम्हारी हो जायेगी।

गागुली तेली वरदान की बात सुनकर बहुत खुश हुआ। वैसे दौड़ तो कल सवेरे लगानी थी। पर उसके आज ही खुशियाँ मन मे समा नही रही थी। रात को बिस्तर पर लेट तो गया, पर नीद नही आ रही थी। करवटे बदल रहा था। सोच रहा था कम से कम 40 कि.मी. तक तो दौड़ ही जाऊगा। उतनी जमीन मेरी हो जाएगी। उस पर एक बहुत बड़ा शहर बसा लूगा। उसका नाम गागुली शहर रखूंगा। उसका मै सम्राट बन जाऊगा। मेरे लिए एक विशाल महल का निर्माण करवा लूगा। उसमें मेरी एक से एक सुन्दर रानियाँ निवास करेगी। मेरे ठाठ-बाठ निराले ही होगे। मै जिधर भी जाऊंगा, लोग मेरा सम्मान करते मिलेगे। इस प्रकार कई तरह की कल्पनाएँ करते हुए अर्द्धरात्रि बीतने के बाद मुश्किल से उसे नीद आ पाई और सवेरे सूर्योदय के पहले जग गया। शीघ्रता से शौचादि कार्य से निवृत्त होकर राजा के पास आ गया। सूर्योदय का इन्तजार करने लगा। ज्योही सूर्योदय हुआ, सूर्योदय की पहली किरण के साथ ही उसने दौड़ लगानी शुरू कर दी। वह दौड़ता ही गया, दौड़ता ही गया। खूब दौड़ा, खूब दौड़ा, खूब दौड़ा। करीब मध्यान्ह 1 बजे तक दौड़कर वह 45 कि.मी. पार कर गया। तब उसे भान हुआ कि अभी तो वापस जाना भी तो है। 10-20 मिनिट मुश्किल से आराम करके वापस दौड़ने लगा, लेकिन आते वक्त उतनी तेजी से नही आ पाया। जाते समय शरीर मे जितनी तेजी थी, उतनी आते समय नही थी। थकान भी थी, लेकिन सूर्यास्त तक दौड़कर के उस निश्चित स्थान पर पहुँचना जरूरी था। इसलिए वह शरीर की परवाह किये बगैर दौड़ता गया, दौड़ता गया। खबू दम लगाया। आखिर सूर्योस्त तक वह वापस उस निश्चित स्थान पर पहुँच तो गया, लेकिन वहाँ पहुँचते-पहुँचते साँस फूल जाने से फेफड़े फट गए और सदा के लिए वह इस दुनिया से चला गया। सारी जमीन यही की यही धरी रह गई।

इसी प्रकार आज दुनिया मे इन्सान भी पूरी जिन्दगी धन-दौलत, परिवार, मकान के लिए दौड़ लगाता रहता है, लेकिन जिन्दगी का सन्ध्याकाल होते ही सब के सब पदार्थ यही धरे रह जाते है। कोई भी वस्तु उसके साथ नही जाती है। अतः अंधभाव से भौतिक पदार्थो के पीछे न भागकर इन्सान को अध्यात्म साधना मे लगना चाहिये।

❑❑❑

37. लेना तो नींद ही है।

जेठ मास की भरी दोपहरी मे कड़कड़ाती धूप के बीच कलकत्ता से माल खरीदकर उसे ट्रांसपोर्ट पर पहुँचाने के लिए भाई शान्तिलाल ने एक हम्माली वाले को, जो कि फुटपाथ पर सोया हुआ आराम कर रहा था, उसे जगाया और कहा- 'मेरा सामान शर्मा ट्रांसपोर्ट पर पहुँचा दो। मै तुम्हे तुम्हारा मेहनताना दे दूंगा।' हम्माली वाला बोला- 'मै अभी नहीं पहुॅचा सकता हूॅ। इस समय मै आराम कर रहा हूँ।'

शांतिलाल ने कहा- 'अरे वाह ! मै कोई तुमसे फ्री मे तो काम नही करवा रहा हूँ।' हम्माली वाला बोला- 'वह तो ठीक है। पर मुझे नही जाना।'

शान्तिलाल बोला- 'मेरा सामान पहुँचा दो। मैं तुम्हे दोगुना पैसा दूगा।' 'ज्यादा पैसा मिलने से क्या हो जाएगा।' शान्तिलाल ने कहा- 'यह बता कि पैसे से क्या नही होता ? सबकुछ हो सकता है। यदि तुम्हारे पास कुछ पैसे ज्यादा आ जाएंगे तो तेरे कपड़े अच्छे बन जाएंगे।' हम्माली वाला बोला- 'और ज्यादा पैसे आ जाएंगे तो ?'

'तो क्या अभी तुम फुटपाथ पर सो रहे हो, फिर एक छोटा-सा मकान बना लेना।'

'और ज्यादा पैसे आ गए तो ?'

'तो फिर शहर के बाहर एक बंगला बना लेना।'

'इससे भी ज्यादा पैसे आ जायेगे तो ?'

'तब फिर एक इम्पोर्टेड गाड़ी खरीद लेना और बैठकर घूमना।'

'और इससे भी ज्यादा पैसे आ गए तो ?'

'तो फिर भारत से बाहर, अमेरिका, चीन, जापान, बैकांक, हांगकांग, सिंगापुर आदि देशों मे घूमकर आ जाना।'

'उसके बाद भी पैसा आता रहे तो क्या करना ?'

'तो फिर अपने बंगले मे आराम से नींद लेना।' शान्तिलाल ने समझाया।

हम्माली वाला बोला- 'वह काम तो मै अभी कर रहा हूॅ। लेना तो अन्ततः नीद ही तो है। फिर नीद लेने के लिए इतना लम्बा चक्कर लगाने की कहाँ आवश्यकता है। किसे मालूम कि इतना सब काम पूरा होगा भी या नहीं। बहुत से लोग तो इससे पहले ही इस दुनियाँ से उठा लिए जाते है। उनका काम अधूरा ही रह जाता है। यदि पूरा हो भी जाये तो आराम से नीद के लिए इतने वर्ष तो वेकार ही निकल जाते है। मुझे नही लगानी ऐसी दौड़। मुझे नीद लेने दो।'

शान्तिलाल को उस हम्माली वाले ने बहुत बड़ी नसीहत दे दी। सतोष ही परम सुख का स्थान है।

□□□

38. खिसक-खिसक कर कुएं में गिरा।

रामदेव नाम का एक लड़का बचपन मे ही सन्यास ले चुका था। एक बार वह जंगल से शहर मे आ रहा था। उसने बैड-बाजे सुने और पीछे एक पुरुष व एक महिला को आते देखा। उसने किसी व्यक्ति से पूछा कि 'यह सब क्या हो रहा है ?' उस व्यक्ति ने सन्यासी को समझाया कि 'यह शादी हो रही है।' बचपन मे ही दीक्षित होने से उसे व्यवहारिक ज्ञान नही था, इसलिए रामदेव ने पूछा- 'यह शादी क्या बला है ?'

उस व्यक्ति ने कहा- 'शादी का मतलब स्त्री-पुरुष साथ-साथ रहते है।'

साधु ने पूछा- 'इससे क्या होता है ?'

तब उस पुरुष ने समझाया- 'उसके बाद बच्चे-बच्ची पैदा होते है और उसके बाद उनका एक परिवार बन जाता है।'

साधु रामदेव ने सारी बात सुन ली और आगे बढ़ गया। रास्ते मे इस पर चिन्तन करते हुए चल रहा था। चलते-चलते दोपहरी का समय हो गया था। दोपहरी मे एक कुए की मेड़ पर आराम करने के लिए गुरु-चेले रुक गए। गुरुजी गॉव मे भिक्षा हेतु चले गए। चेला कुएं की मेड़ पर लेट गया। कुछ देर लेटने पर उसे नीद लग गई और उसे स्वप्न आने लगा।

स्वप्न मे उसने देखा कि उसकी भी शादी हो चुकी है, उसके पास सुन्दर पत्नी आ चुकी है। दोनो सोए हुए है। इतने मे कुछ ही देर मे उनके एक बच्चा हो जाता है। बच्चे को बीच मे सुलाते हुए रामदेव की पत्नी ने रामदेव से कहा कि 'कुछ पीछे खिसको, ताकि बच्चा आराम से सो सके।' रामदेव पीछे खिसक गया। कुछ ही देर बाद रामदेव की पत्नी को दूसरा बच्चा पैदा हो जाता है। तब उसने पति से कहा- 'कुछ और पीछे खिसको, ताकि मै दूसरे बच्चे को भी बीच मे सुला सकूं।' रामदेव नीद मे ही थोड़ा और पीछे खिसक गया। रामदेव की पत्नी ने दूसरे बच्चे को भी बीच मे सुला दिया।

कुछ ही समय बाद उसके तीसरा बच्चा भी पैदा हो गया। तब पत्नी बोली- 'ओ जी, पीछे खिसक जाईये, ताकि मै अपने तीसरे बच्चे को भी बीच मे सुला सकूं।' आखिर रामदेव परेशान होकर कुछ और पीछे खिसक गया।

इस बार वह ज्योही नीद में पीछे की ओर खिसका, त्योही वह कुएं मे जा गिरा। हाथ-पैर मे चोट आई। चिल्लाने लगा।

कुएं मे ही पड़े-पड़े वह सोचने लगा- 'यह कैसा सपना ? सपने की सुन्दरी ने भी मुझे खड्डे मे लाकर पटक दिया। यदि मैं सच में ही शादी कर लेता तो वह पता नहीं मुझे कहाँ ले जाकर गिराती।' वह कराहने लगा। इतने मे उसके गुरुजी भिक्षा लेकर आए और अपने चेले को न पाकर ढूंढने लगे। आवाज लगाई- 'रामदेव ! रामदेव !! तब कुएं में पड़ा रामदेव बोला- 'गुरुजी ! मै यहॉ कुएं मे पड़ा हूँ। मुझे निकाल दीजिये।' गुरुजी ने उसे बाहर निकाला और लगी चोटो का इलाज किया। उसके बाद उससे पूछा कि 'रामदेव ! तू कूएं मे कैसे गिर गया ?' उसने गुरुजी को सच्ची-सच्ची बात बता दी और गुरुजी का उपकार माना कि आपने मुझे ऐसी पिशाचिनी सुन्दरी से बचा लिया।

□□□

39. दो चुटकी नमक : दो चुटकी हरड़

देवदत्त नाम का ब्राह्मण, प्रकृति से भोला, दरिद्री अवश्य था, परन्तु कुछ विशिष्ट प्रकार की पुण्यवानी भी साथ लेकर आया था। ज्योतिष-कर्म आता नही था। पढ़ा-लिखा भी नही। एक वैद्य के यहाँ दवाई कूटने-पीसने की नौकरी कर ली। समय गुजरने लगा। एक दिन वैद्य के पास गाँव का सेठ आया और कहने लगा- 'वैद्यराजजी ! मेरा पेट बहुत दर्द करता है। अजीर्ण आफरा बना रहता है। खाने मे रुचि नही है। किसी काम में मन ही नही लगता।'

सारी बात सुनकर वैद्यराजजी समझ गए कि इसे कब्ज की शिकायत है। उन्होने दो चुटकी नमक और दो चुटकी हरड़ मिलाकर, दो पुड़िया बनाकर उसे देते हुए कहा कि इसे ले जाओ। एक पुड़िया अभी और एक पुड़िया शाम को गर्म पानी के साथ ले ले लेना। सेठ ने वैद्य कहे अनुसार पुड़िया ले ली। परिणाम स्वरूप अर्द्धरात्रि बीतने के साथ ही पेट मे घड़घड़ाहट होनी शुरू हुई और दस्तें होने लगीं।

रातभर मे दस बारह दस्ते लग गई। सेठ परेशान अवश्य हो गया, परन्तु उसका पेट हल्का और मस्तिष्क स्वस्थ हो गया। वह वैद्यजी के पास जाकर बोला- 'वैद्यराजजी, और तो सब ठीक हो गया है, पर बड़ी कमजोरी आ गई है।' इसके लिए वैद्यजी बोले, 'दो दिन तक घी खीचड़ी और कढ़ी खाओ, ठीक हो जाएगा।'

सेठ ने वैसा ही किया। तन्दुरुस्त होकर वह खुश हो गया और एक नया धोती जोड़ा तथा 51 रुपये लाकर वैद्यजी को भेट किये। पहले फीस निश्चित नही हुआ करती थी। ठीक होने पर खुश होकर व्यक्ति अपने सामर्थ्य के अनुसार वैद्यराजजी को जो भी दे जाता था, वे वह रख लेते थे। जब वैद्यराजजी को सेठ ने 51 रुपये दिये तो देवदत्त ब्राह्मण ने भी देखा। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सोचा मुझे दिनभर कूटने-पीसने के महीनेभर के 5 रुपये मिलते है, जबकि वैद्यराज को तो एक ही व्यक्ति 51 रुपये दे गया। धोती जोड़ा अलग। यह इलाज करना तो मुझे भी आ गया। सभी बीमारियो का एक ही इलाज है। फिर मै क्यो यहॉ दिनभर मेहनत करता रहूॅ। मै भी वैद्य बनकर पैसे कमाऊंगा।

बस एक ही दवाई के नाम पर वह वैद्य बन बैठा। नौकरी छोड दी और दूर शहर जाकर वहॉ एक मकान किराये लिया। धोती-चोला पहना, तिलक-छापा लगाया और वैद्यराजजी बनकर बैठ गया। बोर्ड पर लिखा दिया किसी भी प्रकार के रोग का शर्तिया इलाज किया जाता है। लेकिन काफी दिनो तक तो कोई इलाज कराने ही नहीं आया।

एक बार जरूर कुम्हारिन के साथ एक घटना घट गई। उसका गधा घुम हो गया था। उसने कई जगह ढूढा, पर वह मिला नही। भोली कुम्हारिन परेशान होकर तिलक छापे लगाए इस वैद्यराज के पास पहुॅच गई और बोली कि 'महाराज ! मेरा गधा गुम हो गया है। कहॉ मिलेगा ? बताओ।'

यद्यपि वैद्यगिरि मे ज्योतिष का कोई स्थान नही, पर उसे तो सभी रोगो का एक ही इलाज पता था। देवदत्त ने कहा- 'घबराओ नही। अभी तुम्हारा इलाज हो जाएगा। दो पुड़िया देता हूॅ। एक अभी ले लेना और एक रात को सोते वक्त ले लेना। सब ठीक हो जायेगा।' कुम्हारिन ने कहा- 'सुनो ! मेरे पेट मे कोई बीमारी नही है। मेरा गधा गुम हो गया है।'

वैद्य बोला- 'विचार करने वाली बात नही है। मै कहू, सो करो। बस पुड़िया ले लेना। फिर काम न हो तो बोलना।'

भोली कुम्हारिन आखिर मान गई। पुड़िया ले गई। एक उसी समय व एक रात्रि मे सोते समय गर्म पानी के साथ ले ली। बस वही हुआ। अर्द्धरात्रि के बाद पेट

में घड़घड़ाहट होने लगी और दस्ते लगनी शुरू हो गयीं। कुम्हारिन बार-बार लोटा लेकर बाहर जाने लगी। जाते-जाते थक गई।

सुबह जल्दी लगभग 4-5 बजे फिर जंगल जाने का प्रसंग बना। उसने देखा कि इतनी जल्दी तो लोग जगे नहीं है। अतः एक सूने मकान के बाड़े मे जंगल जाने बैठ गई। ज्योंही दस्त के साथ घड़घड़ाहट की आवाज आई, त्योही एक आश्चर्य घटित हुआ। उसी सूने मकान के बाड़े मे गधा रेकने लगा। कुम्हारिन ने जब गधे के रेकने की आवाज सुनी तो अपना काम समेटकर वह थोड़ा आगे पहुँची और हाथ लगाकर देखा- 'अरे ! यह तो मेरा ही गधा है। जो इस सूने मकान के बाड़े मे बैठ गया था।'

उसे गधा मिल गया। गधा पाकर वह बहुत खुश हुई और वैद्यराजजी का बहुत उपकार मानने लगी। वह सोचने लगी कि यदि वैद्यराजजी पुड़िया नही देते तो गधा नही मिलता। सवेरे-सवेरे ही कुम्हारिन वैद्यराज के पास पहुँची और बोली- 'आप तो वाकई सिद्ध पुरुष हैं। मुझे गधा मिल गया, पर कमजोरी बहुत आ गई है।' वैद्यराजजी ने कहा- 'घबराने की कोई बात नही है। दो दिन तक घी-खिचड़ी और कढ़ी खाओ। सब ठीक हो जाएगा।'

हुआ भी वही। कुम्हारिन भी खुश होकर 21 रुपये और धोती जोड़ा लेकर भेट करने वैद्यराजजी के पास पहुँची। वैद्यराजजी भी अपनी दवा का असर देखकर बहुत खुश हुए। कुम्हारिन ने वैद्यराजजी की प्रशंसा के पुल बांध दिये।

उसी शहर मे राजा अरिमर्दन रहते थे। वे किसी कारण से अपनी बड़ी रानी सुलक्षणा पर बहुत नाराज थे। उसके पास राजा का आना-जाना बन्द हो गया था। इससे महारानी सुलक्षणा काफी परेशान रहती थी। उसने विभिन्न तरीकों से पुरुषार्थ भी किया, पर कुछ भी असर नही हुआ। एक बार कुम्हारिन मटकियाँ देने महलो मे पहुँची। बातचीत के दौरान उससे महारानी ने अपनी अन्तर्व्यथा कही। उसे सुनकर कुम्हारिन बोली- 'महारानी साहिबा ! सुनो, मैं आपको कारगार उपाय बताती हूँ। अपने शहर मे देवदत्त नाम के वैद्यराजजी आए हुए है। वे सभी प्रकार की बीमारियो का इलाज करते हैं। उनसे पूछें।'

महारानी बोली- लेकिन मेरे शरीर मे तो कोई बीमारी है नही। मेरे तो मन की बीमारी है। उसे वैद्यराजजी कैसे ठीक कर देगे।'

कुम्हारिन- 'मै कहती हूँ। वे सभी प्रकार का इलाज करते है। आप एक बार उन्हे बुलाकर पूछ तो लें। मेरा गधा भी गुम गया था, वह भी उन्होने वतला दिया था।' आखिर मरता क्या नही करता। बड़ी महारानी ने दासी के माध्यम से देवदत्त वैद्य को

अपने भवन मे बुलाया और उसे सारी स्थिति समझाई। वैद्य के पास तो सौ रोगो की एक ही दवा थी। उसने कहा- 'महारानीजी ! कोई विचार मत करिये। मै दो पुड़िया दूगा। सब ठीक हो जाएगा।' महारानी बोली- 'वैद्यराजजी ! मेरे पेट मे दर्द नही हो रहा है, जिसे पुड़ियो की आवश्यकता पड़े। मुझे तो राजाजी को खुश करना है।'

भोला वैद्यराज बोला- 'महारानीजी ! पहले आप पुड़िया लीजिये। उसके बाद अगर आपका काम न हो, तो कहना। मै कहता हूँ सोलह आना पक्का आपका काम हो जाएगा।'

जब इन्सान का रोग या समस्या नही मिटती, तो फिर जो भी इलाज मिल जाए, वही करने की कोशिश करता है। महारानी ने भी वैद्यराज की बात को आजमाना ही उचित समझा। एक पुड़िया गर्म पानी के साथ तुरंत ले ली और दूसरी पुड़िया रात्रि मे सोते समय ले ली। बस फिर क्या था, महारानी का पेट खुल गया। यानी की दस्ते ही दस्ते होना शुरू हो गई। दिन मे 20-25 दस्त होना शुरू हो गई। तीन दिन तक दस्ते रूकी ही नही। महारानी के शरीर मे भारी कमजोरी आ गई। उनका उठना-बैठना मुश्किल हो गया। यहॉ तक कि स्थिति नाजुक बन गई। शहर भर मे चर्चा हो गई कि बड़ी महारानी की तबियत सीरियस है। राजा साहब ने भी सुना तो उनके मन मे विचार आया कि 'यद्यपि मेरी उनसे अनबन है, लेकिन मरते वक्त तो मिल ही लेना चाहिये। मरते वक्त सारे झगड़े मिटाकर प्रेमभाव कर लेना चाहिये।' यही सोचकर सम्राट बिना किसी आमत्रण के ही बड़ी महारानी के महल मे पहुॅच गए। सम्राट को आता जानकर महारानी को सुखद आश्चर्य हुआ। सम्राट जाकर स्वयं बोले- 'महारानीजी ! कुछ कारणो से आपसे बोलचाल बन्द हो गई थी। परन्तु मन मे ऐसी कोई बात नही है। आपकी तबियत पूछने ही आया हूॅ। आप किसी प्रकार का विचार न करे।' इस प्रकार औपचारिक बाते करके कुछ देर बैठने के बाद सम्राट चले गए। महरानी भी पुड़िया का चमत्कार मान गई। एक बार संकोच टूट जाने से राजा-रानी मे बड़े आराम से बातचीत होने लगी। पहले जैसा स्नेही हो गया। बल्कि भूल सुधार हो जाने से स्नेह मे अधिक प्रगति हुई। महारानी के शरीर मे कमजोरी कुछ ज्यादा ही आ गई थी। वैद्यराजजी ने वही घी-खीचड़ी व कढ़ी खाने का संकेत दिया। कुछ ही दिनो मे महारानी का स्वास्थ्य अच्छा हो गया। महारानी भी वैद्यराज का चमत्कार मान गई तथा 500 रुपये नकद व धोती जोड़ा उन्हे भेट स्वरूप दिया।

अब क्या था। वैद्यराजजी का सिक्का चल पड़ा। शहर भर मे उनकी प्रशसा होने लगी। लोगो की भीड़ जमा होने लगी। पर उनके पास तो इलाज के रूप मे एक ही दवा थी। जिससे सभी प्रकार का इलाज हो रहा था।

एक बार तो शहर पर भारी समस्या आ पड़ी। शत्रु पक्ष की सेना ने चारो तरफ से शहर को घेर लिया। सभी दरवाजे बंद कर दिये गए थे। क्योंकि आक्रमण अचानक हुआ था। सम्राट के पास प्रतिकार करने के लिए सशक्त सैन्य बल नही था। अब करें तो क्या करे! सम्राट मंत्रिमण्डल के साथ गुप्त मंत्रणा करने मे लग गये। किसी को कुछ हल नही सूझ रहा था। सभी विचारमग्न थे। भोजन का समय हो गया। बिना किसी ठोस निर्णय लिए राजा उठ गए। सभी लोग भोजन करने के लिए चले गए। राजा राजमहल मे गया, खाना सामने रख दिया गया। पर सम्राट का चेहरा उदास था। रानी ने सम्राट से पूछा- 'प्राणनाथ ! आज चेहरे पर उदासीनता बहुत गहरी है। ऐसा क्या कारण हुआ ?'

सम्राट बोले- 'रनिवास संबंधी ऐसी कोई बात नहीं है। राजकीय सुरक्षा संबंधी उलझने चलती रहती है।'

महारानी ने कहा- 'ऐसा कौनसा भारी संकट चल रहा है ?'

सम्राट- 'शत्रु पक्ष ने हमारे नगर को चारों ओर से घेर लिया है। हमारे पास सैन्य शक्ति कम है। विरोधी राजा के पास विशाल वाहिनी सेना है। ऐसी स्थिति मे जीवन संकट में चल रहा है। चारो तरफ से दरवाजे बंद कर दिये गए है। जब तक खाद्य साम्रगी नगर मे है, तब तक तो काम चल जाएगा। पर ऐसे कब तक चलेगा ? परेशानी भारी है।'

महारानी ने तुरन्त कहा- 'आप किसी प्रकार का विचार न करे। अपने शहर में एक नए वैद्यराजजी आए है। बल्कि उन्हे वैद्यराजजी न कहकर सिद्धराजजी कहा जाना चाहिए। उनके पास सभी तरह का इलाज है। आप उनके पास जाकर इलाज करवा लीजिये। सब संकट ठीक हो जाएगा।

सम्राट बोले- 'महारानी ! यह इलाज वैद्यों से नहीं होता। यह तो प्रशासनिक सुरक्षा व्यवस्था का सवाल है।'

महारानी बोली- 'राजन् ! इसकी आप चिन्ता न करे। वे सभी प्रकार का इलाज करते हैं। आप पूरा भरोसा रखे। वे जो भी कहें, कर लीजिये। फिर देखिये, इलाज होता है या नहीं ?'

यद्यपि राजा को जरा भी विश्वास नही था, पर बार-बार के प्रबल आग्रह के कारण सम्राट ने वैद्यराज को बुलाया और सारी समस्या उनके सामने रखी।

वैद्यराजजी ने ध्यान से सबकुछ सुना। उनके पास तो सब बातो का, सब रोगो का एक ही इलाज था। वे बोल- 'राजन् ! आपके कितने सैनिक हैं ?'

सम्राट- 'कोई पाँच हजार।'

वैद्य- 'शत्रु सेना कितनी है ?'

सम्राट- 'कोई दस बारह हजार।'

वैद्य- 'ठीक है कुछ विचार न करे। बस मै कहूँ, वैसा करते जाईये। सभी सैनिको को वर्दी पहनाकर शाम को 6 से 8 बजे के बीच मेरे पास भेज देना। मै सबको पुड़िया दूंगा। एक तो वे उसी वक्त ले ले और एक रात्रि को सोने से पहले ले ले। बस सब ठीक हो जाएगा।'

'यह कैसे ठीक हो जाएगा ? उनके पेट तो खराब है नही ?' सम्राट के कहने पर वैद्यराजजी बोले- 'आप इसकी चिन्ता न करे। मै जो कह रहा हूँ, एक बार वैसा ही करे। उसके बाद यदि काम न बने तो मुझे कहना।'

'मरता क्या नही करता' कहावत के अनुसार अनचाहे भी सम्राट ने सभी सैनिको को शाम को वैद्यराज के पास जाने का निर्देश दे दिया।

उस वैद्यराज ने दो चुटकी नमक और दो चुटकी हरड़ के पेटेन्ट फार्मूले के अनुसार हजारो पुड़िया बना ली और आने वाले हर सैनिक को दो-दो पुड़िया दे दी। साथ मे निर्देश भी दे दिया। सभी सैनिको ने निर्देशानुसार पुड़िया ले भी ली। बस फिर क्या था। रात्रि के बारह बजे दस्त लगना प्रारंभ हुई। एक-एक सैनिक कोई पॉच-पॉच, छः-छः बार जगल गया। जगल जाने के लिए सभी को शहर से बाहर ही जाना पड़ता था। सैनिक भी वही गए। हजारो सैनिक बार-बार जगल जा रहे थे, आ रहे थे। शत्रु पक्ष के गुप्तचरो ने अधेरे में हजारो सैनिको को आते-जाते देखा। उन्होने सोचा- 'अब तक कितने हजार सैनिक आ जा चुके है। फिर भी हजारो की सख्या मे आते जा रहे है।' उन्हे आश्चर्य हुआ कि लगता है राजा के पास कम से कम 20-25 हजार सैनिक है। तभी इतने बाहर आ रहे है। गुप्तचारो को चेहरे तो दिखाई दिये नही। बार-बार आने-जाने को उन्होने अलग-अलग सैनिक मान लिए और अपने सम्राट को सूचना दी कि हम भ्रान्तिवश यहॉ आ गए है। राजा के पास तो 20-25 हजार सैनिक जमा है। यदि युद्ध हुआ तो हम मारे जायेगे। राजा ने जब गुप्तचर रिपोर्ट सुनी तो वह भी विचार मे पड़ गया और बिना लड़े ही जान बचाने के उद्देश्य से भाग छूटा। राजा के जाते ही सारी सेना भी स्वतः ही घेरा छोड़कर अपने देश लौट गई। इधर जब शहर मे राजा को पता चला कि शत्रु सेना घेरा तोड़कर जा चुकी है, तो उन्हें भी बड़ा आश्चर्य हुआ। सम्राट भी वैद्यराज का चमत्कार मान गए।

बस फिर क्या था। राजा ने वैद्य को विधिवत् राजवैद्य घोषित कर दिया। रहने के लिए सुन्दर भवन दे दिया। नौकर-चाकर सेवा मे लगा दिये। रथ, घोड़े एवं सुरक्षा

के लिए सैनिक भी दिये। पूरा राजकीय सम्मान किया गया।

वैद्यराजजी यद्यपि कुछ जानते नही थे, पर उनकी पुण्यवानी प्रबल थी। प्रबल पुण्यवानी के फलस्वरूप व्यक्ति जिस किसी काम में हाथ डालता है, वह काम जरूर सफल हो जाता है।

□□□

40. चार लाख का सार एक श्लोक में

धारा नगरी में राजा भोज के सामने विभिन्न विषयो के चार विशिष्ट विद्वान् पहुँचे। अपनी-अपनी विशेषता बतलाते हुए उनमे से एक विद्वान् ने कहा- 'राजन् ! मै राजनीति का विद्वान् हूँ और उस पर एक लाख श्लोक का ग्रन्थ तैयार करके लाया हूँ।' दूसरा बोला- 'मैं धर्मशास्त्र का विद्वान हूँ। उस पर मैने एक लाख श्लोकों का प्रणयन किया है।' तीसरे विद्वान् ने अपने को आयुर्वेद मे निष्णांत बताते हुए एक लाख श्लोक के रूप मे एक ग्रन्थ बनाने की बात कही। चौथे विद्वान् ने बतलाया कि 'मै कामशास्त्र का विद्वान् हूँ और मैंने भी कामशास्त्र में एक लाख श्लोको का निर्माण किया है। हम चारों विद्वान् आपके सामने अपने ग्रन्थो को सुनाना चाहते है।'

राजा भोज उन विद्वानों की बातो से काफी प्रभावित हुए। साथ ही सोचा कि इन विद्वानों को विस्तार से लिखने की कला तो आती है। पर 'गागर मे सागर' भरने की कला भी आती है या नहीं। इसकी भी परीक्षा कर लेनी चाहिये। यह सोचकर सम्राट ने कहा- 'विद्वान् महाशयों ! मैं आपकी विद्वता का पूरा आदर करता हूँ, पर इतने विशालकाय ग्रन्थों को सुनने का मेरे पास समय नहीं है। राज्य संचालन संबन्धी अनेक काम रहते हैं। यदि आप इन ग्रन्थों को सारभूत रूप मे संक्षिप्त कर सकें तो मैं सुनने की सोच सकता हूँ।'

विद्वानो ने राजा की बात सुनी और कहा कि ठीक है। हम वैसा कर देते है। सभी ने एक-एक लाख श्लोकों के सार को पचास-पचास हजार श्लोकों मे कर ।द : और फिर आकर राजा से कहा- 'राजन् ! आधे मे सार भर दिया है। अब सुन लीजिये।'

राजा ने कहा- 'विद्वानो ! इसे और संक्षिप्त करिये।' राजा के कहने पर विद्वानों ने एक-एक लाख के श्लोकों के सार को पच्चीस-पच्चीस हजार श्लोकों मे

कर दिया। तदनुसार राजा को सुनाने आए तो राजा का पुनः आग्रह रहा कि इसे और संक्षिप्त किया जाये। विद्वान् महाशयों ने और सक्षिप्त करके दस-दस हजार श्लोको मे सार भर दिया। इस बार भी सक्षिप्तीकरण के अनुक्रम मे राजा ने फिर वही बात दोहरायी और इसी क्रम में विद्वान् भी सक्षिप्त करते-करते सारे ग्रन्थो का सार एक-एक श्लोक में ले और उससे भी संक्षिप्त करने का आग्रह करने पर एक ही श्लोक की चार लाइनो में से एक-एक चरण मे एक-एक ग्रन्थ का सार भर दिया।

इस सारभूत स्थिति के आने पर राजा ने कहा- 'हाँ ! अब मै तुम्हारे ग्रन्थो का सार सुनने के लिए तैयार हूँ।' उपस्थित सभासद भी इस निचोड़पूर्ण बात को सुनने के लिए पूरी तरह से जागरुक हो गए।

सबसे पहले राजनीति शास्त्र के विद्वान् महाशय ने राजनीति का सार बतलाते हुए कहा- 'बृहस्पतेर विश्वासः'। राजनीति के प्रणयनकर्त्ता बृहस्पति ने कहा है कि राजनीति मे किसी पर भी विश्वास-भरोसा नही किया जा सकता है। अधिक भरोसा करने वाला इन्सान धोखा खा जाता है। यद्यपि विश्वास के बिना दुनिया चलती नही, पर इतना विश्वास भी नही करना चाहिये कि सामने वाले के धोखा देने पर हमारी जिन्दगी खतरे मे पड़ जाये। वर्तमान मे हो रही राजनीति की भारी उलट-फेर, फेर-बदल राजनीतिक अविश्वसनीयता पूरी तरह स्पष्ट कर रही है।

राजनीति के विद्वान् के बोलने के बाद धर्मनीति के विद्वान् ने धर्मशास्त्र का सार सुनाया- 'कपिलः प्राणिनांदया'। धर्मशास्त्र के प्रवर्तक कपिल ऋषि ने सपूर्ण धर्मशास्त्र का सार प्राणियो की दया-रक्षा को बतलाया है। जिस धर्म मे दया का विधान नही, वह धर्म नही हो सकता। भगवान महावीर ने भी 'अहिसा परमो धर्मः' बतलाया है। व्यास ऋषि ने भी अठारह पुराणो का सार दो शब्दों मे 'पर-उपकार' अर्थात् दूसरो की रक्षा मे धर्म और 'पर-पीड़ा' मे पाप, अधर्म बतलाया है।

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचन द्वयम।
परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम्।।

तुलसीदासजी भी यही कहते है-

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये। जब तक घट में प्राण।।

यही बात राजा को विद्वान् ने एक वाक्य मे बतलाई।

तीसरे विद्वान् ने बताया कि आयुर्वेद के विद्वान् आत्रैय ऋषि ने कहा है- 'जीर्णेः भोजन मात्रैयः'। आयुर्वेद रचयिता- आत्रैय ऋषि का कहना है कि सभी रोगो की एक ही दवा है- लघन करना, उपवास करना। 'लघन परमौषधम' उपवास को परम औषधि बतलाया है।

कामशास्त्र के विद्वान् ने राजा को कहा- 'पांचालः स्त्रीषु मार्दवम्।' कामशास्त्र के रचियता पांचाल ऋषि ने कामशास्त्र का सार स्त्रियों के प्रति मृदुतापूर्ण व्यवहार करने को बतलाया है।

चारों विद्वान् महाशयों द्वारा अपने-अपने विषय की सारभूत बात सुनकर राजा बहुत प्रभावित हुए। बाद में समय-समय पर सारा ग्रन्थ भी श्रवण किया। चारों विद्वानो का सम्मान करते हुए उन्हें एक-एक लाख रुपये पुरस्कार के रूप में दिये।

□□□

41. दुःख का मूल कारण : मोह

भगवान महावीर ने कहा है 'दुःखं हयं जस्स न होई मोहो।' जिस व्यक्ति का मोह समाप्त हो गया है, उसका दुःख भी समाप्त हो जाता है। मोह ही दुःख को बढ़ाने वाला विशेष है।

सेठ लक्ष्मीचन्द का एकाकी बेटा पॉच साल विदेश में पढ़कर इंजीनियरिंग की डिग्री लेकर देश लौट रहा था। उसने अपने पिता को तार दिया। उसमे सदेश था कि 'मैं हवाई जहाज से 12 तारीख को बंबई और उसी दिन शाम को राजधानी एक्सप्रेस मे बैठकर 13 तारीख को सवेरे गाँव आ रहा हूँ।' सेठ लक्ष्मीचन्द तार को पढ़कर अपार खुश हुआ। उसकी खुशियाँ दिल में समा नही रही थी। प्रथम तो एक ही बेटा, फिर पाँच वर्ष दूर रहा है और अब पढ़-लिखकर ग्रेज्युएट होकर घर आ रहा है। सेठ की खुशियों का क्या कहना ? इन खुशियों को सब में बाँटने के उद्देश्य से 13 तारीख को ही एक बड़े भोज का आयोजन किया। सैकड़ो व्यक्तियो को आमंत्रित कर दिया गया। बंगले को भी रंग-पॉलिश करके फर्नीचर से सजा दिया गया। मानो लड़के की शादी ही हो रही है। सारी तैयारी करके सेठ 12 तारीख की रात को सो गया।

13 तारीख को सवेरे उठते ही जब दैनिक अखबार को उठाकर पढ़ना प्रारभ किया तो ऊपर ही ऊपर मुख्य समाचार थे कि कल रात को आने वाली राजधानी एक्सप्रेस गलती से लाइन चेन्ज न कर पाने की वजह से सामने से आ रही मालवाहक गाड़ी से टकरा गई। उसमें करीबन 100 आदमी मारे गए और 150 आदमी घायल हो गए।

ज्योही लक्ष्मीचन्द सेठ ने यह समाचार पढ़े कि उसके हाथ-पैर ठडे हो गए, मस्तिष्क शून्य हो गया, शरीर निष्क्रिय हो गया और वे धम्म से पलग पर गिर गए। सोचने लगे इसी गाड़ी मे तो मेरा बेटा भी आ रहा था। लगता है वह भी उनके साथ मारा गया। अब क्या होगा ? जब एक ही बेटा हो और वह भी न रहे तो जिन्दगी मे कोई रस नही रह जाता। सदमा बड़ा गहरा बैठा। अब उनका किसी काम मे मन नही लगता। खाने-पीने की भी रुचि खत्म हो गई। एक ही चिन्ता उन्हे खाए जा रही थी। 2-4 घटो मे सेठ की हृदय गति भी उखड़ने लगी। नौकर-चाकर घबरा गए। सेठानी भी चिन्तित हो उठी। आखिर सेठ को एकदम क्या हो गया। बड़ा सेठ होने के नाते कई तरह के डॉक्टर उपस्थित हो गए। हृदय की धड़कन और नाड़ी के गिरते पल्स। खतरे को देखकर डॉक्टरो ने तुरन्त उपचार चालू कर दिया। ग्लूकोज की बोतले चढ़ने लगी। इजेक्शन लगने लगा। यहॉ तक कि उखड़ते श्वास को देखकर ऑक्सीजन सिलेण्डर तक लगा दिया। किन्तु जितना उपचार किया जा रहा था, मर्ज भी उतना ही बढ़ता गया। सेठ की मुर्दानगी मे कही कोई रौनक नहीं आ रही थी। डॉक्टर भी काफी चिन्तित थे।

इतने मे मध्यान मे एक तार और आया, जिसे नौकर ने सेठ की ऑखो की तरफ किया। उसमे लिखा था 'पूज्य पिताजी ! मै दोस्तो के आग्रह से एक दिन बंबई रुक गया हूँ। अब 13 की शाम को रवाना होकर 14 को सवेरे आ रहा हूँ।' इतना पढ़ते ही सेठ मे गजब की शक्ति का सचार हुआ और वह एक झटके से उठ बैठा। बोला- 'मेरा बेटा जिन्दा है, मेरा बेटा जिन्दा है।' डॉक्टर से बोला- 'आपने मेरी नाक मे क्या लगा रखा है ? हाथ मे क्या लगा रखा है ? हटाओ इनको।' डॉक्टरो ने देखा- 'यह क्या हो गया ? लगता है मस्तिष्क का दौरा पड़ गया है।' डॉक्टर उन्हे आराम करने की सख्त हिदायत देने लगे, लेकिन सेठ सोने को बिल्कुल तैयार नही है।

आखिर सेठ ने अपने हाथ से नाक की, हाथ की नली को निकाल फेका। डॉक्टर सोचने लगे, सेठ पागल हो गया, और सेठ सोचने लगा कि डॉक्टर पागल है। जबर्दस्ती मुझे रोगी बना रहे है। आखिर डॉक्टर ने सेठ की नाड़ी देखी, हार्ट देखा तो उन्हे आश्चर्य हुआ कि सब नार्मल है। आखिर यह हुआ कैसे ? खोज करने पर ज्ञात हुआ कि बेटा जिन्दा है, सूचना मिलते ही खुशियॉ छा गई। यह बेटे का मोह ही सेठ को दु:खी बना रहा था। ट्रेन मे इतने लोग दूसरे भी मरे है, उसकी कोई पीड़ा नही है। किन्तु मेरा बेटा मरा होगा, यह दु:ख बढ़ाता है।

हम अपनेपन को छोड़ दे तो दु:ख भी समाप्त हो सकता है। यह सच है

कि दुनिया में मेरा कोई नही है। जो सम्बन्ध है, वे औपचारिक है; जो दुःख बढ़ा रहे है। सेठ की खुशियाँ बाहरी पदार्थो पर आधारित है। जो आधार है, वह आधार हटने के साथ बिखर भी जाता है। सेठ का मोह, उसके तन-मन और जीवन को अस्वस्थ बना रहा था।

मोह के आवेग मे आने वाला सुख भी सुख न होकर सुखाभास होता है। अतः सच्चा सुख निर्मोह साधना मे ही उद्भूत हो सकता है।

❑❑❑

42. मन से मन पर प्रभाव

जैन धर्म में योग तीन प्रकार के बतलाए हैं- मन योग, वचन योग, काय योग। काय से तात्पर्य सम्बन्ध से है। जिस प्रकार वचन और काया से दूसरो से सम्वन्ध स्थापित किया जा सकता है, इसी प्रकार मन से भी दूसरो से सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। मन से, किसी के प्रति की गई अच्छी और बुरी सोच का प्रभाव सम्बन्धित व्यक्ति पर अवश्य पड़ता है। जैन धर्म मे मन की हिंसा, अहिंसा को भी वचन और काया की हिसा, अहिंसा की तरह ही प्रधानता से स्वीकार किया गया है। मन की सोच किस प्रकार दूसरों को प्रभावित करती है इसके लिए एक प्राचीन उदाहरण आता है-

वाराणसी नगर के सम्राट अजितसेन की सवारी शहर के बीच से निकल रही थी। हजारो लोग सम्राट के दर्शन कर रहे थे। उसी भीड़ के बीच शहर का चन्दन का व्यापारी मणिभद्र भी खड़ा था। उसके मन में विचार आ रहा था कि सालभर हो गया, चन्दन की लकड़ियो से गोदाम भरा हुआ पड़ा है। खाली ही नही हो रहा है। कोई खरीरदार आ नहीं रहा है। ऐसी स्थिति मे क्या किया जाये ? लेकिन ज्योंहीं उसने सम्राट अजितसेन को देखा, त्योही उसके मन मे एक विचार आया कि यदि सम्राट मर जाये तो मेरा सारा चन्दन का काष्ठ बिक सकता है। कमाई अच्छी हो सकती है। उसने प्रभु से प्रार्थना की कि 'हे भगवान ! मेरा यह काम हो जाना चाहिये।'

ठीक उसी वक्त सम्राट की दृष्टि मणिभद्र पर पड़ी। उसे देखते ही सम्राट की आँखो में खून उतर आया। उसे ऐसा लगने लगा कि यह मेरा जानी-दुश्मन है। उसे जान से मार दिया जाये। जैसे कोई जन्म-जन्म का वैर राजा के मन मे उभर रहा

हाँ। क्यो इतना गुस्सा अकारण ही मणिभद्र पर आ रहा है, यह सम्राट को भी समझ मे नही आ रहा था। राजा ने मन की यह बात मंत्री सुबुद्धि के सामने रखी और इसका कारण खोजने के लिए कहा।

कारण जानने के लिए सुबुद्धि प्रधान ने चन्दन व्यापारी मणिभद्र से दोस्ताना सबध स्थापित किये। दोस्ती मे एक दोस्त दूसरे को जायज-नाजायज हर बात कह देता है। सेठ मणिभद्र ने भी एक दिन मन की बात सुबुद्धि प्रधान से कह ही दी। व्यापार ठप्प है, मेरे पापी मन मे एक विचार बार-बार आता है कि यदि राजा मर जाये तो मेरा चन्दन बिक सकता है। सेठ की बात सुनकर सुबुद्धि प्रधान को समझते देर नही लगी कि इसी बुरे विचार का अदृश्य रूप से राजा पर प्रभाव पड़ रहा है और उनके मन मे भी मणिभद्र के प्रति हिंसात्मक विचार आ रहा है। खैर....। अब तो मणिभद्र को मैने दोस्त बना लिया है, ऐसी स्थिति मे उसके हितो की रक्षा करना कर्त्तव्य है और राजा का समाधान भी करना है।

एक दिन सुबुद्धि प्रधान ने राजा से निवेदन किया- राजन् ! जो नया महल बन रहा है, उसके दरवाजे, खिड़कियॉ, कुर्सियॉ आदि सभी चन्दन की होनी चाहिये। ताकि सारा महल चौबीसो घटे चन्दन की महक से महकता रहे। बाहर से आने वाले अतिथि भी इससे प्रसन्न होगे। राजा को बात जॅच गई। जँचने पर फिर क्या था। रुपये की कमी तो थी नही। मंत्री को ही आदेश दिया कि बढ़िया से बढ़िया चन्दन खरीद लिया जाये और यह काम शुरू कर दिया जाये।

राजा के आदेशानुसार सेठ के गोदाम से सारा का सारा चन्दन खरीद लिया गया, क्योकि बढ़िया काष्ठ चन्दन उसी के पास था। अब तो चन्दन काष्ठ की बार-बार मॉग होने लगी। सेठ के यहॉ जितना भी चन्दन आता, उसे राजा खरीद लेता। अब मणिभद्र सोचने लगा- 'सम्राट जुग-जुग जिओ, ताकि मेरा धन्धा दिन दूना, रात चौगुना चलता रहे।' अब सेठ सम्राट के दीर्घ जीवन की दिन-रात कामना करने लगा। एक दिन राजा की सवारी फिर निकली। इस बार राजा ने मणिभद्र को देखा तो उस पर वात्सल्य भाव उमड़ पड़ा। उस पर भाई से भी ज्यादा प्रेम उठने लगा। राजा को समझ मे नही आया कि 'कुछ दिन पहले यही व्यक्ति जानी-दुश्मन लगता था और आज भाई से भी ज्यादा लग रहा है; आखिर ऐसा क्या है ?'

सुबुद्धि प्रधान के सामने राजा ने यह सारी स्थिति भी रखी। मंत्री बोला- 'राजन् ! यदि आप अनुचित न माने तो मै सारी स्थिति आपके सामने रख सकता हूँ।' राजा ने कहा- तुम निःसकोच भाव से कहो। जो भी तुम कहोगे, मै उसे बुरा नही मानूगा। किसी के प्रति विपरीत धारणा नही बनाऊगा।

मंत्री ने राजा की मौत सोचने से लेकर अब जिन्दगी चाहने तक की मणिभद्र की सारी बात रख दी और कहा- 'राजन्! यह सब मानसिक सोच का प्रभाव है। व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति जैसा चिन्तन करता है, उसका भी उन पर अदृश्य रूप से प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।'

अतः मानसिक सोच को भी सही रखने की आवश्यकता है।

❑❑❑

43. इन्सानी परछाई भी हानिकारक

सदियों से पशु जाति जिस ढंग से चल रही है, आज भी उसकी गतिविधि करीब-करीब उसी ढर्रे पर चल रही है, परन्तु इन्सानी दुनिया मे आश्चर्यजनक प्रगति हुई है। खान-पान, रहन-सहन आदि क्षेत्रो में इन्सान ने अपनी सुविधाओ मे प्रगति की है, लेकिन इस स्वार्थपरक प्रगति ने इन्सानी जीवन का हाल-बेहाल कर दिया है।

इस संदर्भ मे एक लोककथा प्रचलित है। एक बार बंगाल के एक तर्कशास्त्री तेल लेने तेली के पास गए। तेली तेल देने लगा। उस वक्त देखा कि एक बैल घाणी के चारों तरफ चक्कर लगा रहा है। न कोई उसे हांकने वाला है और नही कोई पास में खड़ा है। यह बैल चलकर क्यो थक रहा है।

तर्कशास्त्री ने तेली से कहा- 'तुम्हारा बैल बड़ा मूर्ख है। बिना कारण ही चल-चलकर थक रहा है। एक जगह खड़ा क्यो नहीं हो जाता।' तेली ने कहा- 'शास्त्रीजी ! यह पशु है, इन्सान नहीं। इसे एक बार हांक दिया जाए तो फिर वह अपने आप चलता रहता है।'

तर्कशास्त्री- 'अगर वह रुक जाये तो तुम्हे कैसे पता चलेगा ?'

तेली- प्रथम तो वह रुकता नही और अगर रुक भी जाता है तो उसके गले में घंटी बंधी है। जब तक वह चलता है, तब तक घंटी वजती रहती है और जव वह रुक जाता है, तो घंटी बंद हो जाती है। मुझे घंटी की आवाज न आने से पता चल जाता है और फिर आकर इसे हांक देता हूँ।'

तर्कशास्त्री- 'अरे वाह ! बैल इतना भी नहीं समझता कि वह आराम से खड़ा हो जाये और खड़े-खड़े घंटी हिलाता रहे। ताकि आराम भी मिलता रहे और घंटी भी बजती रहे।'

तेली ने यह सुनते ही कहा- 'शास्त्रीजी ! आप यहाँ से तुरन्त चले जाईये। आपकी परछाई भी मेरे बैल के लिए खतरनाक हो सकती है। यदि इसने आपकी यह बात सुन ली और इसने खड़े-खड़े ही घटी हिलाना चालू कर दिया तो मै मुश्किल मे पड़ जाऊंगा। फिर इसे चलाने के लिए नई युक्ति कहाँ से लाऊँगा।'

□□□

44. भेरिया नाई ने कहा

कहावत है कि दीवार के भी कान होते है। अतः कोई भी गोपनीय बात सोच-समझकर निरीक्षित-परीक्षित करने के बाद ही कहना चाहिये।

सम्राट चतुरसेन ने बढ़ी हुई दाढ़ी को कटाने के लिए शहर के भेरिया नाई को बुलाया। भेरिया नाई अपनी पेटी लेकर राजमहल मे पहुँचा। वह बाहर के प्रकोष्ठ से भीतर के प्रकोष्ठ मे गया, तब तक सम्राट दिखलाई नहीं दिये तो उसे द्वारपालो ने कहा- 'अन्दर में जाईये।' वह और अन्दर चला गया। वहाँ भी राजा नजर नही आए; तो फिर उससे कहा गया कि और अन्दर जाईये। इस बार भेरिया नाई भी कुछ घबरा सा गया कि पता नहीं सम्राट कहाँ बैठे है। भीतर से भीतर कहॉ ले जा रहे है। लेकिन भीतरी प्रकोष्ठ मे जाने के बाद एक स्वच्छ पाट पर राजा बैठे हुए मिल गए। ज्योही नाई अन्दर घुसा, बाहर खड़े अगरक्षको ने दरवाजा बद कर दिया। यह देखकर नाई अन्दर ही अन्दर किसी अनिष्ट की आशका से घबराया; पर बोल कुछ नही सका।

भेरिया नाई के अन्दर आने के बाद सम्राट ने बड़े इत्मीनान से अपना मुकुट उतारा। पर यह क्या ! मुकुट उतारते ही राजा के कान जो अन्दर दबे हुए थे, वे बाहर आकर लटक गए। क्योंकि राजा का चेहरा तो इन्सान का था, लेकिन कान बकरे के थे। यह देखकर भेरिया नाई अचम्भित रह गया।

वह कुछ बोले, उससे पहले ही सम्राट ने नगी तलवार अपने हाथ मे लेकर उसकी नोक भेरिया नाई के गले से सटा दी और कहा- 'सुन! यह बात किसी को मत कहना कि राजा के कान बकरे जैसे है। यदि तू किसी को नही कहेगा तो जितनी बार बाल काटने, दाढ़ी साफ करने यहॉ आएगा, तब-तब तुझे 2 स्वर्ण मोहरे दी जाएगी। पर कभी भी तेरे मुह से यह बात किसी के भी सामने निकल गई तो तेरी गर्दन उसी दिन धड़ से अलग कर दी जायेगी। सोच ले, जिन्दगी चाहिये तो यह बात गुप्त रखनी होगी।'

भेरिया नाई का तो गला सूख गया था। प्राण गले मे आ गए थे। उसने हकलाते हुए कहा- 'राजन्! आपका हुक्म तो सिर माथे पर है। मै पूरा विश्वास दिलाता हूँ कि किसी को भी यह बात नहीं कहूगा।' राजा बोला- 'तो फिर बाल काटो और दाढ़ी साफ करो।'

भेरिया नाई घबराता-घबराता बाल काटने लगा और राजा की दाढ़ी की भी सफाई की। सारा काम हो चूकने के बाद राजा ने उसे दो स्वर्ण मोहरे दीं। मोहरे लेकर भेरिया नाई प्रकोष्ठ से बाहर निकला। हर प्रकोष्ठ के बाहर पहरेदार नंगी तलवार लिए खड़े थे। भेरिया नाई तो बस बाहर निकलता ही चला गया। महल मे से निकलकर जब वह बाजार के बीच पहुँचा, तब कही जान मे जान आई। अब वह अपने घर की ओर जाने लगा तो रास्ते मे चलते-चलते उसके मस्तिष्क मे बार-बार विचार उठने लगा कि 'वाह ! क्या कमाल है। राजा के कान तो बकरे जैसे है और किसी को पता भी नही। केवल मै अकेला ही जानता हूँ इतनी गोपनीय बात को। सारी प्रजा-जनता इस बात से अनजान है कि राजा के कान बकरे जैसे हैं। यह सोचते-सोचते भेरिया नाई घर पहुँच गया। लेकिन इतनी विशिष्ट गोपनीय बात उसे पच नही पा रही थी।

भेरिया नाई इस घटना को लेकर अपने आपको अति विशिष्ट व्यक्ति समझने लगा। मन में भारी उथल-पुथल मची रहती। बात मन मे पच नही रही थी। इसी ऊहापोह में बीच वह खाना खाने बैठा। उसकी पत्नी खाना खिला रही थी। उसकी पत्नी ने हाव-भाव से ताड़ लिया कि इनके मन मे कुछ न कुछ भाव तरंगे उठ रही हैं, जिसे यह कह नही पा रहे है। आखिर होशियार पत्नी ने अपने पति से पूछ ही लिया . क्या बात है ? आप कुछ न कुछ सोच रहे है, लेकिन बोल नही रहे है। ऐसी बात है जो मुझसे छिपा रहे है ?

भेरिया नाई बोला- अरे भली मानस! तुमसे छिपाने वाली कोई वात है ही नहीं। ऐसे ही कुछ बाते मन मे उठती रहती है, कोई खास बात नही है। इस वात से भेरिया की पत्नी को समझ में आ गया कि कुछ न कुछ बात अवश्य है। वह अड़ गई व गोपनीय बात को उगलवाने के लिए आग्रह करने लगी। उसके इस आग्रह को देखकर भेरिया नाई भी विचार में पड़ गया कि अगर इसको कुछ न वताऊं तो तिरिया-हठ बड़ा विचित्र है। बताऊं या नही ? सोचा- 'पत्नी तो अर्द्धांगिनी है। इसे बताने मे कोई एतराज नही होना चाहिये। यह तो किसी को वताएगी नही। यह मेरे प्राणों की रक्षा भी तो करेगी।'

यही सब सोचकर भेरिया नाई ने वतलाना प्रारम्भ किया कि 'मैं राजा के

बाल काटने व दाढ़ी की सफाई करने महलो मे गया था। भीतर ही भीतर ले जाया गया तो मै आश्चर्य मे पड़ गया। फिर भीतर जाने के बाद.....।'

ज्योही महत्त्वपूर्ण बात मुँह से निकलने ही वाली थी कि एकदम भेरिया को याद आया कि हर गोपनीय बात नारी को नही कहनी चाहिये। कहते है कि नारी के पेट मे बात नही टिकती है। अगर मै जो कह रहा हूँ, इसने किसी को कह दिया तो मेरी तो जान ही चली जाएगी। अतः मुझे यह बात नही कहनी चाहिये। एकदम मन मे निर्णायक रुख अपनाया और भेरिया नाई ने बात बदल दी। नाई तो वैसे भी होशियार होते है। भेरिया नाई ने बात बदलकर इस प्रकार सफाई से बात प्रस्तुत की जिसे पत्नी समझ नही पाई और खुश हो गई। भेरयिा नाई ने कहा– 'सुनो ! मैने राजा के बालो की मालिश इतने सुन्दर ढंग से की कि राजा बहुत खुश हो गया और मुझे 2 मोहरे पुरस्कार के रूप मे दी।' यह कहकर उसने वह दो मोहरे अपनी पत्नी को दे दी। सोने की चमक से पत्नी दूसरी बात भूल गई और सोचने लगी कि इन दो स्वर्ण मोहरो से मै अपने लिए आभूषण बना लूंगी। बड़ी–बड़ी सेठानियाँ भी तो आभूषण पहनती है। अब उनके पास जाऊंगी तो मै भी जेवर पहनकर जाऊगी। यह सब सोचकर वह अपनी ही बात मे रम गई।

भेरिया ने बड़ी सफाई से अपनी बात गुप्त रख ली। लेकिन बात कुछ ऐसी थी कि उसको पच नही पा रही थी। बार–बार मन मे उठ रही थी। दिन–रात जब भी खाली मन होता, वह बात घूमा करती, जिससे उसके मन मे बैचेनी–सी रहने लगी सोचने लगा– 'जब तक मै यह बात किसी को कह न दू, तब तक पेट में आफरे की तरह यह मुझे बैचेन करती रहेगी और किसी को कह दू और वह बात राजा के पास चली गई तो मै मुफ्त मे मारा जाऊगा।'

भेरिया नाई ने एक तीसरा रास्ता निकाला, जिससे कि आफरा भी न रहे और बात किसी के पास जाए भी नही। वह घने जगल मे गया और एक विशालकाय पीपल के पेड़ के पास जाकर उसकी खोखर मे बोला– 'राजा के कान बकरे जैसे है, बकरे जैसे है, बकरे जैसे है। ऐसा भेरिया नाई कहता, भेरिया नाई कहता, भेरिया नाई कहता है कि राजा के कान बकरे जैसे है।' बार–बार ऐसा बोलने से उसके मन का आफरा हल्का हो जाता और वह फिर से अपने काम मे लग जाता। इसी तरह दो चार दिन मे जब भी आफरा आता तो वह उस पेड़ के खोखर मे जाकर ।
निकालकर आ जाता था।

एक वार एक नट मण्डली उसी रास्ते से गुजर रही

श्री ..रिह

को देखा तो उन्हें अपने वाद्य-यंत्र बनाने के लिए उस पेड़ का तना उचित लगा और वे वही बैठ गए। पेड़ को काट लिया और उसकी लकड़ी से सितार, तन्दूर, नगाड़ा और झालर आदि यंत्र बना लिए।

उन यंत्रों को लेकर वे सम्राट चतुरसेन की सभा मे पहुँचे और अपनी कला दिखाने के लिए समय माँगा। सम्राट ने उन्हें रात्रि आठ बजे का समय दिया। तव तक सभी उमराव, सरदार भी नाट्य कला देखने उपस्थि हो गये थे।

सबसे पहले सितार-तन्दूरा बजाया जाने लगा। ज्योंहीं उसके तार छेड़े गए त्योंहीं उन तारों से एक अव्यक्त आवाज निकलने लगी- 'तुम न न न तुम न न न रा**जा का*न*न बकरा**जिसा, राजा कानन बकरा जिसा।' इतने मे नगाड़ा वजाया जाने लगा तो उससे आवाज निकलने लगी- 'ढम ढम ढम, ढम ढम ढम- तुमको किसने कहा, तुमको किसने कहा ?' इतने मे तीसरे ने झालर बजाई तो उसमे से आवाज आई- 'झ न न न झ न न न मुझसे भेरिया नाई ने कहा, भेरिया नाई ने कहा, भेरिया नाई ने कहा।'

राजा ने जब यह सुना तो वह आग बबूला हो गया। यह तन्दूरा क्या बोलता है। इसने तो सबके सामने मेरी पोल खोल दी। बुलाओ उस नाई के बच्चे को। उसको कितनी बार कहा था कि किसी को मत बतलाना, फिर भी उसने कह ही दिया। सिपाही गए और भेरिया नाई को पकड़ लाए। राजा का लाल-पीला चेहरा देखते ही भेरिया कांप गया। बोला- 'हजूर ! गुस्ताखी माफ हो। मैने तो ऐसा कुछ अपराध किया नही।' 'क्या अपराध नही किया ?' सम्राट चिल्लाकर बोला- 'जब तुम्हे मना कर था कि किसी को कहना नही, फिर भी तुमने कह दिया।'

भेरिया नाई ने कहा- 'राजन् ! मैंने किसी को नहीं कहा।'

'तो सुन ये तन्दूरा क्या बोल रहा है। सुन जरा इन्हें।' राजा गुस्से से बेभान हो रहा था। तन्दूरा बजाया, नगाड़ा बजाया और फिर झालर बजाई गई। जिसे सुन भेरिया नाई ने सम्राट के पैर पकड़ लिए और कहा कि मैने केवल पीपल के पेड़ के खोखले में बोलने के अलावा किसी को भी आज तक भेद नही वतलाया। पूरी जानकारी करने पर यह स्पष्ट हो गया कि उसी खोखर से ये ढोल, मझीरे, सितारे वने हैं, जिसमे से ऐसी अव्यक्त आवाज निकल रही है।

नाई वोला- 'राजन् ! अपराध माफ हो। ये वाद्य यंत्र जो वोल रहे है यह आपको और मुझे ही समझ आ रहा है। साधारण लोगो को नहीं। अतः इस वात को

न बढ़ाया जाये तो बात यही रहेगी।' इस प्रकार समझाकर नाई ने अपनी जान बचाई और राजा की इज्जत भी।

इसीलिए कहते है कि दीवारो के भी कान होते है। शब्द किसी काष्ठ से चिपके या ना चिपकें पर शब्द एक पुद्गल है......, जो आकाश में घूमता है। इसे पकड़ा जा सकता है। ऐसा आज का विज्ञान भी मानता है।

❑❑❑

45. हब्सी लड़का क्यों हुआ

अरब देश में एक दम्पत्ति मे शादी होने के बाद अच्छा प्रेम था, लेकिन जब औरत को लड़का पैदा हुआ तो उसे देखकर पति-पत्नी में तनाव बढ़ गया। क्योकि वह लड़का हब्सी था। यानि की काला-कलूटा और अंग-उपांगो से टेढ़ा-मेढ़ा। जब पुरुष ने लड़के को देखा तो सोचा- 'मेरी सन्तान ऐसी नही हो सकती। लगता है पत्नी का चारित्र ठीक नही है।' वह अपनी पत्नी पर शंकालु हो गया और उससे बातचीत करना कम कर दिया। यही नही, धीरे-धीरे प्रेम, द्वेष मे बदलने लगा। इधर औरत का कहना था कि मै दावे के साथ कहती हूँ कि मेरा अपने पति के अलावा किसी से भी शारीरिक संबंध कभी नही हुआ। पर दोनो एक-दूसरे की बात मानने को तैयार नही थे। बात बढ़ते-बढ़ते इतनी बढ़ गई कि न्यायालय में चली गई। एक कटघरे मे आदमी और दूसरे कटघर में औरत खड़ी हो गई। दोनो अपना-अपना पक्ष प्रस्तुत करने लगे।

आज तक न्यायालय में ऐसा मुकदमा नही आया था। अतः न्यायाधीश विचार मे पड़ गया। जब कोई निर्णय नहीं सूझा तो अगली तारीख दे दी। उस तारीख को जब दोनो आए तो फिर कुछ सवैधानिक अड़चन बताकर अगली तारीख दे दी। बस अब तारीखे देने का सिलसिला चल पड़ा। एक के बाद एक तारीखें दी जाने लगीं, पर निर्णय कुछ नहीं हो पा रहा था। ऐसा करते-करते न्यायाधीश भी बदल गया। फाईल पर फाईल बनती चली गई, पर मुकदमा उठ नही पाया। अन्त में एक न्यायाधीश आया और उसने इस लम्बे समय से चली आ रही फाईल का गहन अध्ययन किया। साथ ही उस दम्पत्ति से भी पूछताछ की तथा उन्हें निर्देश दिया गया कि न्यायाधीश आपका बेडरूम देखेगे। बेडरूम देखकर न्यायाधीश ने दीवार पर लगे कैलेण्डर को उठाया और अपने साथ रख लिया। अन्त मे यह कहा कि अगले महीने

की अमुक तारीख को आपका निर्णय हो जाएगा। पति-पत्नी दोनो को वहुत आश्चर्य हुआ। अव उन्हे मुकदमें में जो रस आ रहा था, वह निर्णय में नही रहा। वे वस यही चाहते थे कि मुकद्मा चलता रहे, निर्णय की कोई जरूरत नहीं है।

न्यायाधीश द्वारा निर्णय की वात सुनकर पुरुष एवं उस स्त्री मे ही नही, अपितु सारे शहर मे एक चर्चा होने लगी। पता नहीं न्यायाधीश क्या निर्णय देगा। यही सोचते-सोचते समय निकलने लगा। निर्णय के दिन दम्पत्ति के अलावा शहर के हजारो आदमी-औरतें भी न्यायालय मे निर्णय सुनने चले आए। सभी को भारी उत्सुकता थी। ठीक समय पर न्यायाधीश ने अपनी गभीर वाणी मे निर्णय सुनाते हुए कहा कि 'आरोपी इस पुरुष का कहना है कि ऐसा हव्सी लड़का मेरा नहीं हो सकता; तो इसका कहना ठीक है। क्योंकि इसे विश्वास है कि इसका लड़का ऐसा नहीं हो सकता। इधर उसकी पत्नी का कहना भी सही है कि उसका संवंध इस पुरुष के अलावा और किसी से नही हुआ है।' वह सुनकर पव्लिक में शोरगुल होने लगा। जव दोनो सही हैं, तो निर्णय क्या हुआ। एक तो गलत होना ही पड़ेगा। तव न्यायाधीश ने एक पैकेट खोलकर कैलेण्डर वाहर निकाला और उसे सभी को दिखाया। उसमें एक हव्सी वच्चे का फोटो था। यह वही कैलेण्डर था, जिसे न्यायाधीश संवंधित दम्पत्ति के वेडरूम से लाये थे। उसे दिखलाते हुए न्यायाधीश ने कहा कि 'यह कैलेण्डर वच्चे को हव्सी वनाने का मुख्य निमित्त है, क्योंकि जिस समय औरत के गर्भाधान का समय चल रहा था; यह कैलेण्डर उनके वेडरूम मे था। जव जीव ने गर्भ में प्रवेश किया, उस समय इस औरत की दृष्टि इस कलेण्डर पर पड़ रही थी। दोनों समय एक होने पर उस नाजुक दौर में वच्चे पर इस चित्र का प्रभाव पड़ा और उसके अंग भी हव्सी की तरह चले गये। इस कैलेण्डर ने वच्चे को हव्सी वनाने की मुख्य भूमिका निभाई है।

दम्पत्ति एवं सारी जनता न्यायाधीश की वात मान गई। वाहरी चित्र एवं मानसिक सोच के जवर्दस्त प्रभाव का यह ज्वलंत उदाहरण हैं। जैन दर्शन तो मन के प्रभाव को आगमकालीन युग से स्वीकार कर रहा है, पर अव तो भौतिक दुनिया मे भी इसे स्वीकार किया जाने लगा है।

किसी भी नियम का पूर्णतः पालन करने के लिए मन को भी तदनुकूल रखना आवश्यक है। मानसिक पवित्रता ही आत्मा को पावन वनाती है।

❑❑❑

46. लाल किताब में लिखा यूं

स्वार्थपरस्त समर्थ व्यक्ति न्याय का ही गला घोट देता है। एक ही अपराध पर अपने लिए कुछ और दूसरे के लिए कुछ और का न्याय तो न्याय हो ही नही सकता। ऐसा ही यह एक प्रसग है।

एक बार किसी शहर के बाहर एक तेली अपना बैल लेकर खेत की ओर जा रहा था। सामने से राजा का बैल आया। दोनो बैल आमने-सामने हो गए। बस फिर क्या था बहुत कुछ रोकने पर भी परस्पर भिड़ गए। काफी देर की लड़ाई के बाद तेली के बैल ने राजा के बैल को मार गिराया।

तेली का बैल विजयी हुआ। परन्तु तेली के हाथ-पैर फूलने लगे। उसने सोचा- 'राजा तो यह सुनकर नाराज ही हो जायेगे। क्या करे ?

विचार करते हुए उसे एक अच्छी योजना ध्यान मे आ गई और वह जल्दी से राजा के पास गया और बोला- 'राजन्! गजब हो गया।'

राजा ने पूछा- 'क्या हुआ ?'

तेली बोला- 'और कुछ नही महाराज ! मै गरीब आदमी मारा गया। मै अपने बैल को लेकर खेत की ओर जा रहा था। सामने से शाही बैल आ रहा था। दोनो भिड़ गए। शाही बैल ने मेरे बैल को मार गिराया। अब मै खेती कैसे करूगा ? मेरा न्याय होना चाहिये।'

राजा ने सोचा- 'वाह ! मेरा बैल जीत गया। अब क्या बात है।' प्रकट मे राजा बोला- 'दो बैलो की लड़ाई मे एक जीतता ही है। उसमे न्याय की क्या बात है। फिर हम तो इन्सानो का न्याय करते है पशुओ का नही।

राजा के इतना स्पष्ट करने के बाद तेली बोला- 'हुजूर ! ऐसी बात नही है। हड़बड़ी मे बोलने मे कुछ उलट-पुलट बोल दिया गया है। हकीकत तो यह है कि मेरे बेल ने आपके बैल को मार गिराया है। लेकिन जैसा कि आप फरमा चुके है, आप तो इन्सानो का न्याय करते है पशुओ का नही। फिर ठ़ीक है।'

राजा ने जब यह सुना कि शाही बैल मारा गया है, तो तुरन्त उसका स्वार्थ जाग उठा और स्फूर्ति से बोला- 'ठहरो। न्याय तो सबका होगा। चाहे इन्सान हो या पशु हो। प्राण तो सबके एक समान है।'

राजा ने न्यायाधीश को आदेश दिया कि कानून की लाल किताब निकालो।

तब न्यायाधीश ने देखा कि बैल मारने का क्या दण्ड है।

न्यायाधीश ने कहा- 'लाल किताब में लिखा यूं, तेली बैल लड्या क्यूं। बैल का बैल दो और दो सौ रुपया दंड भी।'

जब तेली ने बैल मरने की बात सुनी तो राजा ने निर्णय दिया कि दो मे से एक तो मरता ही है। ऐसा न्याय था और जब शाही बैल के मरने की सूचना आई तो न्याय भी कर दिया गया। ऐसा न्याय सही न्याय नही माना जाता।

□□□

47. नादान की दोस्ती

एक सम्राट ने बन्दर को उछल-कूद करते हुए देखा तो सोचा कि यदि बन्दर को सही तरीके से प्रशिक्षण दे दिया जाये तो वह सुरक्षा कार्यो में इन्सान से भी ज्यादा सहायक बन सकता है। यही सोचकर सम्राट ने कई बदरों को प्रशिक्षण दिया। इसमे से एक बन्दर तो इतना अधिक प्रशिक्षित हो गया कि राजा ने रात्रि में स्वयं की पहरेदारी करने के लिए उस बन्दर को रख लिया। बन्दर अपने हाथ में नंगी तलवार लेकर सम्राट की पहरेदारी बड़ी ईमानदारी के साथ किया करता था। राजा भी इस बात से संतुष्ट था।

लेकिन एक बार बन्दर ने अपनी नादानी भरी हरकत कर ही दी। उसने देखा कि राजा की नाक पर एक मच्छर बार-बार आकर बैठ रहा था। बन्दर उसे उड़ाने की बहुत कोशिश करता, लेकिन वह मच्छर भी कुछ ऐसा ही था कि वह पुनः आकर राजा को परेशान करने लगा। बन्दर को मच्छर पर गुस्सा आया और सोचा यह ऐसे नही मानेगा। इसका तो काम तमाम ही करना पड़ेगा। यह सोचकर मच्छर को मारने के लिए उसने तलवार खड़ी की ओर एक ही झटके मे मच्छर के साथ राजा की गर्दन भी धड़ से अलग कर दी।

नादान बन्दर यह नही समझ पाया कि मच्छर राजा के शरीर पर वैठा है। तलवार चलाने से राजा को भी हानि हो सकती है। राजा के मरने पर पूरे महल मे हाहाकर मच गया, लेकिन दोष किसको दे। इसीलिए कहा गया है कि- 'नादान की दोस्ती, जी का जंजाल।'

□□□

48. दो पत्नी का दण्ड नहीं चाहिये

एक बार किसी घर मे रात्रि मे चोर घुस गया। वह चोरी करने के लिए इधर-उधर देख रहा था। इतने मे उसे लगा कि अभी सेठ जाग रहा है और घटना भी बड़ी अजीब घट रही है।

उस सेठ की दो सेठानियाँ थी। एक मकान के ऊपर वाले हिस्से में रहती थी और दूसरी नीचे वाले हिस्से में रहती थी। इस प्रकार सेठ ने उनकी व्यवस्था कर रखी थी। सेठ एक रात्रि ऊपर जाता व एक रात्रि नीचे ठहरता था। आज की बारी नीचे की थी। लेकिन वह भूल गया। ऊपर जाने लगा और पाच-सात पगातिये ऊपर चढ़ भी गया।

सेठ को ऊपर जाते देख नीचे वाली सेठानी ने कहा- 'सेठजी ! आज की बारी तो नीचे की है, आप ऊपर कैसे जा रहे है ?'

सेठ ने कहा- 'अच्छा। अच्छा !! ध्यान नही रहा। अब मै नीचे आता हूँ।' सेठ वापस नीचे आने के लिए मुड़ने लगे।

इतने मे ऊपर खड़ी सेठानी ने भी यह सब देख लिया। वह बोली- 'बारी ऊपर की हो चाहे नीचे की। लेकिन जब सेठ सा. की इच्छा ऊपर की है तो तू कैसे रोक सकती है ? सेठ सा. आज ऊपर ही आएगे।'

उधर नीचे वाली सेठानी बोलने लगी कि नीचे की बारी होने से सेठ साहब नीचे ही आएंगे। इसी जिद्धोजहद मे ऊपर वाली सेठानी ने सेठ का हाथ पकड़ लिया और वह ऊपर ले जाने लगी। तब छोटी वाली भी कहॉ चूकने वाली थी। उसने सेठ का पैर पकड़ लिया और वह नीचे की ओर घसीटने लगी। अब क्या था, एक ऊपर की ओर खीच रही थी तो दूसरी नीचे की ओर। इसी खीचातानी मे सेठजी की पीठ की चमड़ी भी छिलने लगी। रगड़के लगने लगे। परेशान हो गए सेठजी । सेठजी ने किसी भी एक को छोड़ने के लिए बहुत कहा, पर दोनो मे से एक भी छोड़ने को तैयार नही थी। यह रस्साकसी का मजा एक अधेरे कोने मे खड़ा चोर भी ले रहा था। वह भी सब देख रहा था। भूल गया कि वह चोरी करने आया था।

रात्रिभर दोनों सेठ को रगड़ती रही। ज्योही थोड़ा प्रकाश होने लगा तो ऊपर वाली सेठानी ने हाथ छोड़ दिया, तब नीचे वाली ने भी पैर छोड़ दिये। सेठ संभला तो उसे सामने कोने मे चोर खड़ा दिख गया।

सेठजी अपना दु:ख तो भूल गए और जोर-जोर से चोर-चोर चिल्लाने लगे। परिणाम स्वरूप बाहर से गुजर रहे गस्ती दल ने आवाज सुनकर चोर को पकड़ लिया। उसे राज दरबार में हाजिर किया। राजा के सामने सारी बात रखी गई। राजा ने कहा- 'यह चोर अवश्य है। चोरी करने भी निकला। पर चोरी कर नही पाया। अब इसे दण्ड क्या दिया जाये।' इतने मे चोर बीच मे बोल पड़ा- 'राजन् ! आप मुझे कुछ भी दण्ड दे दें, चाहे मृत्युदण्ड भी दे देवें; पर दो सेठानियो, दो पत्नियो वाला दण्ड मत देना।'

राजा चक्कर में पड़ गया। यह क्या बात है। ऐसी क्या आफत है दो पत्नियो की। लोग तो अपने मौज-शौक के लिए दो-दो, तीन-तीन पत्नियाँ रखते है और तुम कहते हो यह दण्ड है। यह कैसे ?'

चोर ने कहा- 'राजन् ! मै ठीक कहता हूँ। यदि आपको विश्वास न हो तो इन सेठजी का ऊपर का अंगरखा खुलवाकर देख लीजिये। इनकी पीठ पर क्या निशान है। फिर आपको विश्वास हो जाएगा।'

राजा ने सेठ की ओर देखा और पूछा- 'यह क्या कह रहा है ?'

सेठ को समझते देर न लगी कि उसने रात की खींचा-खीची देख ली है। सेठ ने सोचा कि अब सारे समाज के बीच इज्जत जाएगी। इससे अच्छा है कि इसका दण्ड ही माफ कर दिया जाये।

सेठ ने कहा- 'राजन् ! इस व्यक्ति ने मेरे यहाँ चोरी नहीं की है। यह तो सूर्योदय से कुछ समय पूर्व घर में आया था। कोने में बैठा था तो मैने समझ लिया कि चोर है। इसलिए हल्ला मचा दिया था। ऐसी कोई बात नहीं है।' राजा ने भी ऐसा ही कुछ समझकर उसे छोड़ दिया। चोर मुस्कुराता हुआ वहाँ से निकल पड़ा। सेठ ने भी अपनी इज्जत बचाई।

अपनी इज्जत को बचाने के लिए, अपने दोषों पर पर्दा डालने के लिए दूसरे के दोषों पर भी पर्दा डालने को तैयार हो जाता है। 'तू न कहे मेरी और न कहूँ तेरी' इस कहावत के अनुसार पाप का पोषण करने वाला साधक अपने भीतर भगवत्ता का जागरण नहीं कर सकता।

□□□

49. अक्लहीन बदनसीब

वैद्यराज ठाकुर प्रसाद के पास एक भोलाराम नाम का नौकर रहा करता था। वह नाम के अनुसार भोला ही था। लेकिन कूटना-पीसना-घोना आदि वैद्यराजजी की दवाई का काम वह बहुत अच्छी तरह से सम्पन्न कर लेता था और नौकरी मे भी रुपये न लेकर केवल भोजन और कपड़े से ही सतुष्ट हो जाता था। इसी कारण भोलाराम के इतने भोले होने के बावजूद भी वैद्य ठाकुर प्रसाद ने उसको छोड़ा नही।

एक बार ठाकुर प्रसाद अपने नौकर के साथ किसी गॉव से वापस अपने गाँव आ रहे थे। रास्ते मे एक ऊंट कराह रहा था। ऊंट मालिक उसे ठीक करने का काफी प्रयास कर रहा था, फिर भी ऊट ठीक नही हो रहा था। उसका गला काफी फूला हुआ था। परेशान ऊट मालिक ने जब वैद्यराजजी को आते देखा तो कहा- 'यह अच्छा हुआ वैद्यराजजी, जो आप आ गये। मेरा ऊट बहुत कराह रहा है। उसके गले मे भी काफी सूजन आ गई है। देखो इसे क्या हो गया है।' वैद्यराजजी ने ध्यान से ऊंट के गले को देखा और ऊट के कराहने पर अन्दर झाककर देखा तो समझते देर नही लगी कि ऊंट के गले के भीतर एक मतीरा पूरा का पूरा फॅस गया है। वह न अन्दर जा पा रहा है और न वह बाहर निकल पा रहा है। इसके कारण तकलीफ बढ़ रही है। वैद्यराजजी ने एक कपड़ा लिया, हाथ पर अच्छी तरह लपेटा तथा ऊंट का मुॅह पकड़कर खुलवाया और उसके मुह मे निशान बनाकर मतीरे पर मुक्का मार दिया, जिससे वह टूट गया व गले से नीचे आराम से उतर गया। कुछ ही देर मे ऊट भी स्वस्थ हो गया। ऊट के मालिक ने खुश होकर वैद्यराजजी को 11 रुपये भेट किये। यह सब भोलाराम भी देख रहा था। उसने सोचा, यह तरीका तो बहुत सरल और सीधा है।

एक बार वैद्यराजजी बाहर गए हुए थे। भोलाराम ही औषधालय मे था। उस गॉव मे एक बुढ़िया बीमार हो गई। उसका गला सूज गया था उसका बेटा वैद्यराजजी को बुलाने आया, लेकिन उनके न होने पर भोलाराम को ही मॉजी को दिखाने ले गया। भोलाराम ने देखा की मॉजी का गला सूजा हुआ है। बस उसे ऊट की घटना याद आ गई। वह बोला- 'अभी ठीक करता हूॅ आपकी माताजी को। एक कपड़ा मगवाया, हाथ पर लपेटा और मॉजी का मुँह खुलवाया और मुक्के से एक-दो मार करी।' लेकिन ठीक करना तो दूर, उसकी हालत और गम्भीर हो गई। उसके बेटे कहने लगे- 'यह क्या कर रहे हो' भोलाराम बोला- 'अरे, मै ठीक कर रहा हूॅ। एक-दो मुक्के और मारे तो वह बुढ़िया सदा के लिए इस दुनिया से चल बसी।'

यह देखकर बुढ़िया के बेटो और पास-पड़ौसियो को भी गुस्सा चढ़ आया

और वे सब उसे अंट-संट बोलने लगे। लोगो ने उसकी अच्छी तरह पिटाई भी कर दी। यह कैसा वैद्य है, माँजी को ठीक करना तो दूर उसे जान से मार दिया। यह वैद्य नही हत्यारा है। बेचारा भोलाराम ! पिटता हुआ वहाँ से भाग निकला और औषद्यालय पहुँचा। इतने मे वैद्यराजजी आ गए थे। उन्होने भोलाराम से पूछा- 'तुम्हारा यह हाल किसने किया ?' उसने सारा घटनाक्रम वैद्यराज को बतलाते हुए कहा- 'आपने तो ऊंट के 2-3 मुक्के मारकर उसकी गर्दन ठीक कर दी और वैसा ही मैने माँजी के साथ किया तो वह बजाय ठीक होने के मर ही गई। ऐसा क्यों हुआ ?'

वैद्यराजजी ने समझाया- 'भोला ! ऊंट के मुँह मे तो मतीरा फँसा था, उसको मुक्का मारकर फोड़ दिया; इसलिए वह ठीक हो गया था। परन्तु उस बुढ़िया के मुँह में कोई मतीरा तो फँसा नही था, उसके तो बीमारी की वजह से सूजन थी, उसे मुक्के मारकर तो तूने ढेर ही कर दिया।'

'ओहो, यह मुझे क्या मालूम', भोलाराम बोला। अच्छा अब आगे से ध्यान रखूंगा। पर उसके कहने से क्या होता, आखिर था तो भोला ही।

एक बार वैद्यराजजी एक रोगी को देखने उसके घर गए, जिसको वे पहले दवा दे चुके थे। रोगी की यह शिकायत थी कि दवा का सेवन करने के बाद भी वह ठीक नहीं हो पाया। वैद्यराजजी ने उसकी नाड़ी को ध्यान से देखा फिर कहा- 'तुमने दवा तो अवश्य ली है, पर परहेज कुछ नही रखा। अपथ्य का सेवन किया है।' रोगी ने कहा- 'नही साहब ! मैने ऐसा कुछ नहीं खाया।'

वैद्यराजजी ने कहा- 'हम बतलाते है आपने क्या खाया'। आँखे बन्द की, कुछ सोचा और फिर बोले- 'तुमने मूली खाई है। बोलो खाई या नही ?'

सब आश्चर्यचकित। रोगी बोला- 'हाँ वैद्यराजजी, मूली तो खाई थी।' 'बस इसी से दवा असर नही कर पाई है।' वैद्यराजजी ने उसे समझाया। उपस्थित सभी लोग के नाड़ी विज्ञान से चमत्कृत हो उठे और मान गए वैद्यराजजी की वैद्यगिरी को। वैद्यराजजी ने उस रोगी को दूसरी दवाई दी और घरवालों ने वैद्यराजजी को 21 रुपये भेट दिये।

जब वैद्यराजजी घर से औषद्यालय की ओर आने लगे, तब रास्ते मे भोलाराम ने पूछा- 'साहब यह नाड़ी का अपूर्व ज्ञान तो आपने कभी सिखाया ही नही। कैसे जान लिया आपने कि उस रोगी ने मूली खाई है ?'

वैद्यराजजी- 'अरे भाई ! नाड़ी से कुछ पता नही चलता। नाड़ी देखना तो

केवल बहाना था। बाकी तो मैने उसके पलंग के नीचे मूली के ऊपरी पत्ते पड़े देख लिये थे। इसी से अन्दाज लगा लिया था कि इसने मूली खाई होगी और वह अन्दाजा सही भी निकल गया।'

भोला- 'वाह !!! यह तो बड़ा जोरदार अंदाज है।' उसने अपने मन मे बिठा लिया कि कही मुझे भी काम आएगा।

एक बार ऐसा ही हुआ। वैद्यराजजी बाहर गये थे। किसी रोगी की तबियत ज्यादा खराब थी, उन्हे बुलाने कोई व्यक्ति आया। भोलाराम ने उससे कहा कि 'वैद्यराजजी तो है नही, आप कहे तो मै चल सकता हूँ। अब तो मै भी बहुत कुछ वैद्यगिरी समझ गया हूॅ।'

मरता क्या नही करता। लोग उसे साथ ले गए। देखा, एक रोगी को उल्टियॉ बहुत हो रही थी। वही नाटक किया भोलाराम ने। पहले तो नाड़ी देखी और कहा कि इसने अपथ्य खाया है। फिर कहा- 'क्या अपथ्य खाया, बताऊ ? भोला ने पलग के नीचे देखा तो ऊंट का पिलान पड़ा था। याने ऊंट पर रखने का काष्ठ का आसन। पिलान तो पड़ा था, पर उसे ऊट कही दिखा नही, अतः वह बिना सोचे-समझे ही बोल पड़ा- 'इसने ऊट खाया है।' लोगो ने कहा- 'अरे ! भला ऊट भी कोई खाने की चीज होती है। इसने कोई ऊट नही खाया।'

भोलाराम बोला- 'यदि ऊट नही खाया है तो पिलान तो पड़ा है, फिर ऊट कहॉ गया।' लोगो ने कहा- 'ऊंट को तो पानी पिलाने ले गए है। इसलिए पिलान यहॉ पडा है।' लोगो ने नौसिखिये वैद्य को बहुत भला-बुरा कहा और घर से भगा दिया।

वैद्यराजजी जब घर पर आए तो उन्होने पूछा- 'क्या हुआ।' भोलाराम ने सारी स्थिति बयान कर दी।

वैद्यराजजी बोले- 'भोलाराम ! तू तो भोला ही रह गया। मूली के पत्ते देखकर तो मूली खाने का अन्दाज लगाया जा सकता है। पर पिलान देखकर ऊट का खाने का अन्दाजा लगाना तो मूर्खता का परिचायक होगा। अन्दाज भी उचित-अनुचित देखकर लगाना चाहिये।' भोलाराम को हिदायत दी गई कि अब मुझसे पूछे बिना कही नही जाना।

कुछ दिन बाद वैद्यराजजी किसी रोगी को देखने पास वाले गॉव जा रहे थे। उस वक्त भोलाराम को भी साथ ले लिया। वैद्यराजजी तो घोड़े पर सवार थे। उनकी दवा की पेटी घोड़े पर बधी थी। भोलाराम पैदल-पैदल ही घोड़े के पीछे-पीछे भागा

चला जा रहा था। इतने में घोड़े पर से दवाई की पेटी नीचे गिर गई। वैद्यराजजी को पता नही चला। कुछ दूर आगे जाने पर जब पेटी नही देखी, तब वैद्यराजजी ने पीछे आ रहे भोलाराम से पूछा। वह बोला- 'पेटी तो कभी की गिर चुकी है।'

वैद्यराजजी चौककर बोले- 'क्या ? तुमने उसे उठाया नही।'

भोलाराम- 'आपने कब कहा था पेटी उठाने के लिए।'

वैद्यराजजी- 'अरे भोले ! जा अभी भागकर पेटी ले आ।'

भोलाराम भागा-भागा गया और पेटी उठा लाया।

वैद्यराजजी ने समझाया- 'सुनो! अब घोड़े से कोई भी चीज गिर जाए तो उसे उठा लेना।' भोलाराम ने कहा- 'ठीक है।' कुछ दूर चलने के बाद घोड़े ने लीद कर दी। भोलाराम ने तुरन्त रुमाल फैलाकर लीद झेल ली और वैद्यराजजी से बोला- 'लीजिये। यह चीज गिर रही थी।' वैद्यराजजी ने घोड़ा रोककर रुमाल हाथ मे लिया और देखा कि यह तो लीद है। बौखलाते हुए वैद्यराजजी ने कहा- 'तुमने यह क्या किया ? यह भी कोई लेने की चीज है ?'

इस बार भोलाराम भी भिनभिनाया। उसने कहा- 'आपने कहा था कि जो भी वस्तु गिरे उसे उठा लेना। अत: मैंने आपके कहे अनुसार घोड़े की लीद उठा ली। अब नाराज क्यों होते हो ?'

वैद्यराजजी- 'यह नहीं उठाते।'

'तो फिर क्या उठाना और क्या नही उठाना, इसकी लिस्ट बना दीजिये।' भोलाराम के कहने पर वैद्यराजजी ने कहा- 'देख भोलाराम ! मेरा सामान गिरे, पेटी गिर, कोई कपड़ा गिरे, पगड़ी गिरे तो उठा लेना। हर चीज नहीं उठाना।' भोलाराम बोला, ठीक है।'

कुछ आगे जाने पर सामने से आ रही बैलगाड़ी की गड़गड़ाहट से घोड़ा , गया और जोर से उछला। संतुलन न रह पाने के कारण वैद्यजी उछलकर खड्डे में गिरे पड़े। काफी जगह चोटें लग जाने से कराहने लगे। ऊपर खड़े भोलाराम से बोले- 'भोलाराम ! मुझे काफी चोटे लगी है। मुझे खड्डे से बाहर निकाल दो।'

भोलाराम बोला- 'मै तुम्हे अब नहीं निकालने वाला। पहले लिस्ट देखूंगा। उसमें क्या लेना है और क्या नही लेना है, वह देखूगा। यदि उसमे तुम्हारा भी नाम लिखा होगा तो निकालूंगा।'

भोलाराम ने लिस्ट देखी। कई बार उलट-पलटकर पढ़ा, पर लिस्ट मे कही

भी वैद्यराजजी का नाम नही था। भोलाराम ने कहा- 'लिस्ट में कही भी आपका नाम नही है। मै आपको नही निकालता।' यह कहकर भोलाराम वहाँ से घोडा लेकर रवाना हो गया। वैद्यराजजी खड्डे मे पड़े कराहते रहे।

वैद्यराजजी ने एक मूर्ख नौकर को पाकर सिर पीट लिया।

इसीलिए कहते है कि मूर्ख मित्र से समझदार शत्रु अच्छा है। कितना भी काम का आदमी हो, लेकिन यदि समझदार नही है तो उसे साथ मे रखने पर जिन्दगी खतरे मे पड़ सकती है। अतः इन्सान को चाहिए कि तुच्छ स्वार्थ के पीछे बुद्धिहीन लोगो से सम्पर्क न रखे। स्वार्थवश इन्सान उचित-अनुचित को भुलाकर चलने लगता है, लेकिन उसे वैद्यराजजी की तरह दुःख ही भोगना पड़ता है। स्वार्थ से ऊपर उठकर योग्यता के साथ मूल्यांकन करने वाला इन्सान लम्बे समय तक सुखी बना रहता है।

❑❑❑

50. आंख बन्द करने पर कुछ भी नहीं

एक रात्रि राजा भोज को सुखशय्या पर शयन करने पर भी नीद नही आ रही थी। इधर-उधर करवटे बदल रहे थे। इसी बीच उनकी विचारधारा स्वयं के पास रहे ऐश्वर्य के मूल्याकन की ओर बढ़ी।

सम्राट सोचने लगे- 'मेरे रनिवास-महलो मे चित्त को हरण करने वाली एक से एक सुन्दर रानियॉ है। मेरे मन के अनुकूल चलने वाले बन्धु-बाधव है, जो मेरे हर आदेश-निर्देश को मानते हैं। मेरे सेवक मधुरवाणी के साथ मेरा सम्मान करने वाले है तथा सुशक्ति सम्पन्न हाथी और तेज पवन की गति से दौड़ने वाले घोड़े भी बहुत है। सभी तरह की सुख सामग्री मेरे पास है, कुछ भी कमी नही है। मुझसे अधिक शक्तिसम्पन्न, ऋद्धिसम्पन्न और कौन होगा ?'

सम्राट का अपने ऐश्वर्य पर भीतर ही भीतर अह भी आने लगा और वे अपनी भावनाओ को एक सस्कृत श्लोक मे आकार देने लगे-

चेत्ताहराः युवतयः स्वजनोनुकूलाः
सद्बान्धवा प्रणय गर्भ गिरश्च भृत्याः
गर्जन्ति दन्ति निवहास्तरला तुरगा

श्लोक के तीन चरणो मे ही राजा भोज ने अपनी सम्पदा का वर्णन संकलित कर लिया। सम्राट इन तीन चरणो का ही बार-बार उच्चारण करने लगे, पर चौथा चरण उनसे नही बन रहा था। उन्होने बहुत प्रयत्न किया, पर श्लोक पूरा नहीं हो रहा था।

इधर धारा नगरी का ही लक्ष्मीहीन सरस्वती पुत्र भूक्चण्ड नाम का एक विद्वान् था। अर्थ की दृष्टि से ऐसा लगता था कि लक्ष्मी उससे पूरी तरह रूठ गई है, जिससे गृहस्थ जीवन चलना दूभर हो रहा था। अर्थोपार्जन के लिए ऐसे विद्वान् महाशय भूक्चण्ड भी चोरी करने के लिए तत्पर हुए और रात्रि मे पहुँच गए राजा भोज के कक्ष मे। लेकिन वहाँ जाकर देखा तो राजा भोज जाग रहे थे। भूक्चण्ड घबराए और एक कोने मे अन्धेरे मे जाकर खड़े हो गए। राजा भोज के निद्राधीन होने का इन्तजार करने लगे, लेकिन आज राजा भोज को भी नीद नही आ रही थी। वे बार-बार उन तीन चरणों को ही दोहरा रहे थे, चौथा चरण पूरा ही नही हो रहा था। उनकी गुनगुनाहट विद्वान् चोर महाशय ने भी सुनी। उन्हे श्लोकगत भावो मे राजा का अहकार झलकता लगा, जो उन्हें कतई उचित नही लगा। राजा को सही मार्ग का निर्देश देने के लिए चौथा चरण विद्वान् चोर महाशय ने बोलकर पूरा कर दिया। उस समय वे यह भूल गए कि मै चोर हूँ और चोरी करने के लिए आया हूँ।

तीन चरण राजा भोज के ये थे-

चेत्ताहराः युवतयः स्वजनोनुकूलाः
सद्बान्धवा प्रणय गर्भ गिरश्च भृत्याः
गर्जन्ति दन्ति निवहास्तरला तुरंगा

चौथा चरण चोर ने पूरा किया-

सम्मीलने नयनर्योनहि किंचि दरित॥

अर्थात्- आँख बन्द हो जाने पर यह सारा वैभव कुछ नही है।

यह आवाज सुनते ही एक तरफ तो राजा भोज के अह पर भारी चोट पहुँची। ...ी तरफ उन्हे लगा कि मेरे महलो मे अर्द्धरात्रि के समय कौन व्यक्ति घुस आया ? ताली बजाते ही द्वार पर खड़े अंगरक्षको ने विद्वान् चोर को पकड़ लिया और जेल मे ले जाकर डाल दिया।

अपने श्लोक के तीन चरणों पर और चोर द्वारा निर्मित चौथे चरण पर विचार-मंथन करते हुए राजा भोज को लगा कि चोर द्वारा निर्मित चौथा चरण कितना सटीक एवं सत्य से ओत-प्रोत है।

दूसरे दिन सभा में चोर को उपस्थित किया गया। यद्यपि चोर ने चोरी तो कुछ की नही थी, पर चोरी करने के लिए राजमहलो मे आने का भारी दुःसाहस किया था। इसलिए राजा ने उसके लिए मृत्युदण्ड घोषित कर दिया। फांसी देने के अन्तिम समय मे भूक्चण्ड की अन्तिम इच्छा पूछी गई। भूक्चण्ड विद्वान् तो था ही, उसने राजा से 2 मिनट बात करनी चाही। उसे राजा के सामने लाकर खड़ा किया गया।

भूक्चण्ड ने कहा-

भल्लिनष्टो भार्गवश्चापि नष्टो
भिक्षुर्नद्यष्टो भीमसेनोऽपि नष्टो
भूक्चण्डोऽहं भूपतिस्त्वच राजन्
पंक्तौमस्य हयन्तकस्य प्रवेशाः।।

'हे राजन् ! भलिय नष्ट हो गया। भार्गव नष्ट हो गया। भिक्षु भी नष्ट हो गया और भीमसेन भी चला गया। मेरा नामक भूक्चण्ड है और आपका नाम भूपति है। अब भ अक्षर मे मौत का प्रवेश हो गया है, ऐसी स्थिति मे अगर मेरी मृत्यु होगी तो भूपति आप है। अतः मेरे बाद आपकी बारी है।'

राजा भोज यह सुनकर विचार मे पड़ गए और विद्वान् के बुद्धिचातुर्य से चमत्कृत भी हुए। भोज ने सोचा- 'चोर ने भारी विवशतावश ही चोरी करने का प्रयास किया है। अतः व्यक्ति को नही, व्यक्ति के अन्दर आने वाले दुर्गुणो की जड़ को समाप्त किया जाये।'

राजा ने भूक्चण्ड का धनाभाव मिटाने के लिए एव भकार मे आए मौत के लक्षण को भी हटाने के लिए उसका मृत्युदण्ड माफ कर दिया तथा साथ ही भारी मात्रा मे उपहार भी भेंट किया।

□□□

51. भाग्य बिना कुछ भी नहीं

किसी विचारक ने कहा है- 'समय से पहले और भाग्य से अधिक किसी को कुछ नही मिला है।' बहुत हद तक कथन सत्य भी है। यदि इन्सान के निकाचित् कर्म का उदय है तो ऐसा ही होगा और यदि अनिकाचित् कर्म का उदय है तो उसमे परिवर्तन भी आ सकता है।

विशाला नगरी में राजा अजितशत्रु के राज्य में व्यास ऋषि प्रतिदिन रामायण पाठ सुनाया करते थे। कथा समाप्त होने पर जैसी की उनकी आदत थी, तदनुसार वे 'गुप्त दान महापुण्य' का वाक्य दोहराया करते थे। एक बार राजसभा में बाहर का एक पंडित चला आया। वह प्रतिदिन आने लगा। उसका भी एक वाक्य निश्चित था। वह बोलता था- 'फलति कपालो न भूपालः' अर्थात् कपाल (भाग्य) फलता है, भूपाल/सम्राट नही।' सम्राट मेहरबान हो तथापि यदि भाग्य अनुकूल न हो तो फल नही मिलता।

राजा को यह बात रुचिकर नही लगती। उसका मानना था कि जब सम्राट कुछ नहीं कर सकता तो फिर ये ब्राह्मण यहाँ आते ही क्यो है ? मै इसे सदाम नही देने वाला। समय गुजरता गया। एक दिन राजा ने एक सप्ताह का समय बढ़ाया अर्थात् एक सप्ताह भर विशिष्ट कथा होगी।

प्राचीनकाल मे राजा परीक्षित ने शुकदेव सन्यासी से एक सप्ताह में ब्रह्मज्ञान सुनने की इच्छा प्रकट की। शुकदेव ने तो एक सप्ताह में उन्हे ब्रह्मज्ञान ही बता दिया। कहते हैं तभी से वैदिक सस्कृति मे सप्ताह भर सुनने की प्रक्रिया चल पड़ी। अपने जैनधर्म मे अनादिकालीन परम्परा मे पर्युषण पर्व सप्ताह चला ही आ रहा है। आठवां दिन तो संवत्सरी के रूप मे मनाया जाता है। पर्युषण पर्व तो सप्ताह भर का ही होता है।

सप्ताह पूरा होने पर राजा ने निर्णय लिया कि व्यासजी को गुप्तदान देना है। प्रथम तो उन्होंने नये पंडित को बुलाया और उसे नये पकड़े और चन्द रुपये दिये। तदनन्तर व्यास ऋषि को बुलाया और उन्हे रेशमी वस्त्र से लपेटकर एक कोल्हाफल भेट किया। जिसे देखकर ऋषि व्यास का चेहरा फीका पड़ गया। पर राजा के सामने बोले कुछ नही।

सम्राट ने भी व्यास ऋषि के चेहरे की खिन्नता जान ली। लेकिन राजा ने सोचा, घर जाकर कोल्हाफल तोड़ने पर सारी स्थिति का ज्ञान हो जाएगा। क्योंकि ने किसी चतुर व्यक्ति द्वारा कोल्हाफल का एक टुकड़ा तुड़वाकर उसमें बीज स्थान पर हीरे-पन्ने-माणक आदि लाखो का माल भरवा दिया और फिर से छिद्र को यथावत् बंद करवा दिया, ताकि बाहर से पता नही चले। यही कारण था कि व्यास ऋषि को कोल्हाफल की विशेषता ज्ञात न हो पाई।

व्यास ऋषि अनमने भाव से घर की ओर आगे बढ़ रहे थे। मन ही मन सोच रहे थे कि कितना कंजूस है कि सप्ताह भर के पाठ का यह कोल्हाफल दिया है।

गरीब से गरीब व्यक्ति के यहॉ भी इतना पाठ करता तो कुछ न कुछ रुपया व कपड़ा तो अवश्य दे ही देता। अब राजा को कहे भी कौन ? ऐसा सोचते-सोचते चलते हुए रास्ते मे सब्जी मडी आ गई। व्यास ऋषि को कोल्हू की सब्जी नही भाती थी, अतः एक मालिन को कोल्हू फल देकर उसके बदले मे थोड़ी-सी अन्य सब्जी ले ली और चल पड़े।

इधर नये पडितजी भी स्नान करके बाजार मे सब्जी खरीदने आए तो उन्हे वही विशालकाय कोल्हफल दिखाई दिया। सोचा, इस समय इसका मौसम चल रहा है, अतः इसी की सब्जी खानी चाहिये। दिखने मे यह फल ताजा नजर आ रहा है। मालिन से कुछ भाव मोल करके पडितजी ने वह कोल्हाफल खरीद लिया और लेकर घर की ओर चल पड़े। घर पर जाकर ज्योही उस फल को चीरा, उन्हे आश्चर्य हुआ कि उसके अन्दर से बीज न निकलकर हीरे, पन्ने, माणक, मोती निकल रहे है। पडित को यह देखकर तुरन्त ध्यान आया कि लगता है यह वही फल है, जो राजा ने व्यास ऋषि को भेट मे दिया था। मालिन से जानकारी करने पर बात भी सच निकली। नये पंडितजी ने सोचा कि राजा ने व्यास ऋषि के उपदेशो को ध्यान मे रखते हुए गुप्तदान देकर महान पुण्यार्जन करने का प्रयास किया। लेकिन व्यास ऋषि इस रहस्य को जान ही नही पाए। राजा के मेहरबान होने पर भी भाग्ययोग ठीक न होने से उनके तो एक समय की सब्जी ही हाथ लगी। इधर नये पडितजी के क्या कहने। दूसरे दिन पडितजी ने सूत के जनेऊ की जगह स्वर्ण जनेऊ पहना। करधनी भी सोने की, कड़ा भी सोने का और कपड़े भी सोने के जरीदार पहने। नये पडितजी के तो ठाठ-बाठ ही निराले हो गए।

इधर व्यास ऋषि की तो वही पतली हालत ही बनी रही।

दूसरे दिन जब दोनो पडित सभा मे आए तो राजा को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। राजा ने व्यास ऋषि से पूछा- आपके यह हालात कैसे ?' व्यास ऋषि बोले- 'सप्ताह भर की कमाई मे जब कोल्हाफल मिलेगा तो यही हाल होगा।' राजा ने कहा- 'क्या कोल्हाफल नही तोड़ा।' व्यास ऋषि बोले- 'क्या तोड़ता। मुझे तो उस फल को खाने की भी रुचि नही। अतः सब्जी मण्डी मे उसे देकर दूसरी सब्जी ले ली।'

यह सुनकर राजा ने सिर पीट लिया और पडित की बुद्धि पर तरस खा गए। इधर नये पडितजी मुस्कुरा रहे थे। जब राजा ने उनके ठाठ-बाठ निराले देखे तो पूछा- 'ऐसा माल देने वाला यजमान कौन मिल गया ?' पडितजी मुस्कराते हुए बोले- 'फलति कपालो, न भूपालः'।

जब राजा को बात समझ मे नही आई तो उस पडित ने समझाया कि- 'वह

कोल्हाफल मैंने खरीद लिया और उसी धन का यह परिणाम है। राजन् ! आपकी सम्पत्ति जब मेरे भाग्य मे लिखी है तो वह व्यास ऋषि को कैसे मिल सकती है ?'

इसीलिए कहा गया है-

आरोहतु गिरि शिखरं समुद्र मुल्लंघ्य प्रसासु पातालम।
विधि लिखिताक्षर भातः फलति कपालो न भूपालः॥

चाहे पहाड़ की चोटी पर चढ़ जाओ या फिर समुद्र की अथाह जलराशि मे प्रवेश कर गहराई में उतर जाओ, लेकिन विधि यानी की कर्मो का जो घनीभूत लेख लिखा जा चुका है, वह कपाल (भाग्य) ही फलवान होता है। उसे बदलने की बड़े से बड़े सम्राट में भी ताकत नहीं है।

राजा मान गया। गुप्तदान महापुण्य तो है पर व्यास ऋषि के कर्मो मे नही लिखा है तो उन्हें कैसे मिल सकता है। दूसरों के द्वारा कितना भी सहयोग किया जाये, यदि स्वयं का उपादान सही नही है तो वह इच्छित सफलता नही पा सकता। इन्सान को स्वयं के कर्मो को पुण्य रूप मे बदलने का प्रयास करना अपेक्षित है। अनिकाचित् कर्म, वर्तमान के पुरुषार्थ से बदले जा सकते है। वर्तमान का सही पुरुषार्थ, पाप कर्म को भी पुण्य रूप मे बदल सकता है और वर्तमान का पापपूर्ण पुरुषार्थ पुण्य को पाप रूप में बदल सकता है।

इसीलिए भगवान महावीर ने भाग्य को इतना महत्त्व न देकर पुरुषार्थ को महत्त्व दिया है।

❑❑❑

52. आकाश में तारे लगाना

एक बार दो देश की महा-होशियार दूतियां, जिनमे से एक का नाम तीजा दूसरी का नाम पीजा था, दोनों एक बड़े शहर मे आकर मिलीं। दोनो मे काफी तक औपचारिक बाते होती रही। एक ने कहा- 'मै अपनी होशियारी से चाहूँ तो आकाश के तारे तोड़ सकती हूँ।' दूसरी बोली- 'अगर मै चाहूँ तो टूटे हुए तारो को वापस लगा सकती हूँ।'

'तो फिर हो जाये एक अनहोनी, जिससे दुनिया के लोग हम जैसी दूतियो

के मिलने को देख सके।' दोनो एक-दूसरे से सहमत थी। तीजा बोली पीजा से- 'बहिन ! मै जाती हूँ और अभी आकाश के तारे तोड़कर आती हूँ। दो-चार दिन तो अपने को करिश्मा करने के लिए यहाँ रुकना ही पड़ेगा।'

दोनो शहर के एक अच्छे से मकान मे ठहर गई। तीजा सीधी महलो मे राजा चतुरसेन की इकलौती राजकुमारी मृणालिनि के पास पहुँची। उस समय दूतियो का महलो मे निर्बाध आना-जाना खुला था। मृणालिनि के पास जाकर तीजा उनके पैरो मे पड़कर झार-झार रोने लगी। तीजा को इस प्रकार रोते देखकर राजकुमारी अचम्भित हो गई। वह बोली- 'अरी तीजा ! तुम्हारे जैसी महा-होशियार दूती इस प्रकार रोए, यह शोभा नही देता। बता अचानक ऐसा क्या हो गया ?'

तीजा बोली- 'राजकुमारीजी ! क्या बताऊ मेरी तो जिन्दगी ही बर्बाद हो गई है।' राजकुमारी बोली- 'आखिर ऐसी क्या बात हो गई, जिससे तुम ऐसा बोल रही हो।'

'अरे राजकुमारी जी ! क्या बताऊं, मेरे पतिदेव को कोढ़ हो गया। सारा शरीर पीव रक्त से भरा हुआ है। काफी कुछ उपचार करने पर भी ठीक नही हो रहा है। कल रात को मुझे स्वप्न आया कि अगर राजकुमारी मृणालिनि अपना हाथ तुम्हारे पति के सिर पर रख दे तो वह ठीक हो सकता है; क्योकि राजकुमारी अभी तक अखंडित यौवना है। इसलिए मै आपके सामने प्रार्थना करने के लिए आई हूँ कि किसी भी तरह आपका आशीर्वाद मिल जाये तो वे ठीक हो सकते है। मेरी एव मेरे पति की जिन्दगी आपके हाथो मे है। अब क्या करना, कैसे करना, सब आप पर निर्भर है। आपका जरा-सा सहयोग हमारी डूबती नाव को किनारे लगा सकता है।'

राजकुमारी ने जब यह सुना कि उसका स्पर्श तक किसी के कोढ़ को ठीक कर सकता है, तब उसे अपनी इस सिद्धि पर अन्दर ही अन्दर खुशी हुई। उसने सोचा- 'अगर मेरे हाथ लगते इसका पति ठीक हो गया तब तो सब जगह मेरे चरित्र का डका बज उठेगा।'

नाम की भूख इन्सान को कई बार अनुचित मार्ग की और भी धकेल देती है। यही स्थिति राजकुमारी की भी बनने लगी। उसने कहा- 'तीजा ! तेरा कहना तो ठीक है, परन्तु यह काम संभव कैसे हो सकता है ? प्रथम तो मै कही जा नही सकती। तेरा पति यहाँ आ नही सकता। दूसरी बात यह है कि मै किसी पुरुष का स्पर्श भी नही करती।'

तीजा- 'आपका कहना ठीक है। लेकिन एक जिन्दगी बचाने के लिए

आपका जरा-सा सहयोग करे तो आपका महान उपकार होगा। आपको कही जाना नही पड़ेगा। मैं अपने पति को यहाँ ले आती हूँ। वह महलो मे तो आ नहीं सकते है। पर रात्रि के अंधकार में शॉल ओढ़कर घोड़े पर बैठे हुए झरोखे के नीचे से निकले, तब आप हाथ नीचा करके थोड़ा-सा स्पर्श कर देना। आपके इतना करने से मेरे पति की जिन्दगी बच जाएगी।'

तीजा की बात को सुनकर मृणालिनि पिघल गई और उसने तीजा को स्वीकृति दे दी। स्वीकृति पाकर तीजा वहाँ से निकली और उसी नगर के नगर सेठ लक्ष्मीचन्द के पुत्र सामन्तसेन के पास पहुँची। तीजा को देखकर सामन्तसेन भी आश्चर्यचकित हुआ और बोली- 'अभी इधर कैसे आ गई हो ?'

तीजा- 'बस आप जैसे श्रीमन्तो के दर्शन करने की इच्छा हो गई। इसलिए इधर चली आई।'

सामन्तसेन- 'तीजा ! तुम तो बहुत चतुर दूती हो। कुछ विशिष्ट वस्तु देखी हो तो बतलाओ।'

तीजा बोली- 'वही तो मैं आपको बतलाने आई हूँ। यहाँ के राजा की एकाकी राजकुमारी मृणालिनी आपके यौवन रुप पर मोहित है और वह आपसे मिलना चाहती है।'

सामन्तसेन- 'क्या ? मृणालिनि जैसी अनिंद्य सुन्दरी राजकुमारी मुझे चाहती है ? क्या मेरा व्यक्तित्व इतना आकर्षक है। मुझे तो स्वप्न में भी कल्पना नही थी कि मृणालिनि मुझे चाहेगी।'

तीजा बोली- 'क्या सोच रहे है ? मृणालिनि आपसे मिलने के लिए बेताब हो रही है।' सामन्तसेन- 'लेकिन यह कैसे पता चले कि वह हकीकत मे मुझे चाहती है।'

तीजा- 'इसके लिए भी मैं आपको प्रमाण देने के लिए तैयार हूँ। आप आज रात्रि में सात बजे मृणालिनि के गवाक्ष के नीचे से घोड़े पर बैठकर निकले। यदि वह हाथ से कुछ संकेत करे, तब तो आप मानेगे।' सामन्तसेन- 'बिल्कुल सही है। यदि ऐसा होगा तो मैं मान जाऊंगा।' तीजा- 'तो फिर आप आज ही रात्रि को जाकर प्रयोग करें।'

सामन्तसेन ने सभी तरह से तैयार होकर कपड़े पहनकर ऊपर से शॉल ओढ़ ली। ताकि किसी को भी पता नही चले कि कौन है और ठीक समय पर मृणालिनि के गवाक्ष के नीचे आ गया। मृणालिनि ने समझा, यह तीजा का पति दिखता है। अंधेरे

मे परछाई के अलावा कुछ साफ दिखाई नही दे रहा था। अतः उसने उसके कोढ़ को ठीक करने की दृष्टि से हाथ निकाला और नीचे झुककर उसके सिर पर घुमा दिया, जिससे सामन्तसेन के बालो को स्पर्श कर गया। उसे स्पर्श से सामन्तसेन रोमाचित हो उठा और मान गया कि हकीकत मे राजकुमारी मुझे चाहती है। वह घर पर पहुँचा तो तीजा तैयार थी। उसे देखकर इतना खुश हुआ कि अपने गले मे सवा लाख का कठहार निकालकर तीजा को भेट कर दिया और बोला- 'तीजा ! मान गया तुमको। राजकुमारी के संकेत से तो यह बात पक्की हो गई कि वह मुझे पूरी तरह चाहती है, पर यह बतला कि उसे पाया कैसे जाये ? अब तो जब तक वह मुझे मिल न जाये, मुझे पलभर भी चैन नही'

सामन्तसेन पर काम का भूत बुरी तरह सवार हो गया। कामी आदमी भी एक तरह से अधा होता है। उसके विवेक-नेत्र पूरी तरह बन्द हो जाते है। उसे हित-अहित का भान नही रहता है। यही हाल सामन्तसेन का भी हो गया। तब तीजा ने कहा- 'श्रेष्ठि पुत्र ! जब इतना काम मैंने कर दिया है तो उस राजकुमारी को भी आपकी सेवा मे हाजिर कर दूंगी।' यह सुनते ही कामविह्वल श्रेष्ठि-पुत्र ने एक सोने का कड़ा और भेट कर दिया। उसे तो तीजा के करिश्मे पर पक्का भरोसा था। तीजा ने कहा- 'कल सवेरे आप शहर के किनारे बने आपके खाली बगले पर पहुॅच जाये। मै राजकुमारी को वही पर लेकर आ जाऊगी।'

सवेरे तीजा राजकुमारी के पास पहुँची और बोली- 'राजकुमारीजी! आप तो कलयुग की सती-सावित्री है। ऐसी पवित्रता तो मैने किसी मे ही नही देखी। आपके छूने मात्र से मेरे पति का सारा कोढ़ चमत्कारिक ढग से चला गया। वे काफी कुछ स्वस्थ हो गए है। आपके उपकार को इस भव मे तो क्या भव-भव मे नही भुलूगी। इतना उपकार तो आपने कर ही दिया, बस थोड़ी सी कृपा आपकी और हो जाये तो मेरे पतिदेव की काया कचन जैसी हो जाएगी।'

राजकुमारी मृणालिनि अपनी प्रशंसा सुनकर मन ही मन खुश हो रही थी। उसे अपनी महानता पर गर्व होने लगा था। इसी बीच तीजा ने कहा- 'थोड़ी-सी कृपा और हो जाये।' राजकुमारी ने पूछा- 'अब और क्या चाहिये तुमको ! बोलो ! मुझसे यदि किसी का दुःख दूर होता है तो मै जरूर करूंगी।'

'बस-बस। आप तो दया की अवतार है। युगो-युगो तक आपका नाम रहेगा। अब तो इतना ही काम अवशेष रह गया है कि मेरे पति के पैरो पर कोढ़ का रोग

अभी तक रह गया है। रात्रि को देवी ने मुझे दर्शन दिये और कहा कि अगर राजकुमारी अपना पैर तुम्हारे पति के ऊपर रख दे तो सवकुछ ठीक हो सकता है। राजकुमारीजी ! आप तो महान् है। बहुत कुछ हो गया है अब थोड़ी सी कृपा और कर दीजिये। मेरी जिन्दगी में बहार आ जाएगी।'

राजकुमारी ने कहा- 'तीजा! यह कैसे संभव होगा ? क्योंकि मैं महलों से बाहर जा नहीं सकती और किसी पुरुष को महलो में आने नहीं दिया जाता है। दूसरी बात मेरा पैर किसी पुरुष पर रखना अनुचित होगा।'

तीजा- 'राजकुमारीजी! आप तो महान् पुण्यशाली आत्मा हैं। आप पर परपुरुष का स्पर्श कुछ भी खरावी करने वाला नहीं है। बल्कि आपकी पवित्रता पाकर सामने वाले का उद्धार हो जाता है। वस एक कृपा और कर दीजिए।' प्रशंसा के अभिमान में फूली राजकुमारी बोली- 'यदि तुम्हारे पति स्वस्थ हो सकते हों तो मैं यह भी करने को तैयार हूँ, पर यह काम होना असंभव है।'

तीजा- 'राजकुमारीजी ! यह काम आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिये। वह सव मे पूर्ण सुरक्षित रूप से कर दूगी। मै एक गोल विस्तर (वैडिंग) लाती हूँ। उसमे आप पैर-संकुचित कर सो जाएं। आपको श्वांस लेने की व्यवस्था रहेगी। उस विस्तर को मै उठा लूंगी। किसी को कुछ भी अहसास नहीं होगा। बस घर जाने पर एक मिनिट मे काम हो जाने पर आपको वापस पहुँचा दूंगी।'

राजकुमारी प्रशंसा के चक्कर मे सही वात को सोच नहीं पाई और उसकी बातों मे आ गई। तीजा ने वैसा वैडिंग अपनी योजना के तहत तैयार कर रखा था। उसमे राजकुमारी को सुलाया और उठाकर ले गई सीधी सेठजी के खाली बंगले के भीतरी कक्ष में पहुँच गई। वहाँ श्रेष्ठि पुत्र सामन्तसेन पहले से ही तैयार खड़ा था। तीजा ने कहा- 'लीजिये। आपका काम हो गया।' श्रेष्ठि पुत्र को तो ऐसा लगा, मानो सारी दुनिया का राज्य मिल गया हो। उसने उसी वक्त तीजा को सवा लाख का हार देकर विदा किया। तीजा ने घर से वाहर आकर उस मकान का दरवाजा वाहर से वंद कर दिया और ताला लगा दिया। राजकुमारी किसी भी दरवाजे से वाहर नहीं निकल सकती ऐसी व्यवस्था कर दी। फिर वाहर सड़क पर आकर जोर-जोर से चिल्लाने लगी- । कैसा भयकर कलियुग आ गया है। वड़े-सेठ, साहूकारों के लड़के चरित्रहीन हो रहे हैं। किसे कहा जाये ? अव तो पानी मे ही आग लग गई है।'

यह सुनकर लोग एकत्रित हो गए। लोगों ने पूछा- 'क्या हो गया है ?'

तीजा बोली- 'क्या बतलाऊ ? बतलाने मे शर्म आ रही है।' ऐसी बात सुनकर लोगो ने कहा- 'बतलाओ तो सही। क्या हुआ ?' तब वह बोली- 'नगर सेठ का बेटा सामन्तसेन और सम्राट की पुत्री मृणालिनि दोनो इस मकान मे बद होकर रगरेलियाँ मना रहे है। है ना घोर कलियुग।'

लोगो को पहले तो इस बात पर विश्वास नही हुआ। पर तीजा के कहने के अन्दाज से वे मान गए। फिर सेठ का लड़का अन्दर है, यह खातिरी भी हो गई। बस फिर क्या था, पूरे शहर मे चर्चा फैल गई। इस चरित्रहीनता के अपराध के कारण पुलिस का गश्तीदल भी वहाँ आ गया। उन्होने मकान को चारो आरे से घेर लिया। पुलिस पहरा लगा दिया गया। सारे शहर मे इस बात की सरगर्मी से चर्चा होने लगी। जब यह बात नगर सेठ ने सुनी तो उसे भी घोर दु:ख हुआ। क्योकि उसे यह पता चल ही चुका था कि सामन्तसेन बगले पर ही है। इस समय वहॉ जाने का समय था, जरूर राजकुमारी भी होगी। इधर सम्राट को महलो मे राजकुमारी नही मिली, इसलिए उन्हे पक्का विश्वास हो गया कि वह भी वहाँ चली गई है।

राजा ने सिर पीट लिया। इतनी सुरक्षा के बाद भी वह चली कैसे गई ? इन कामान्धो को न माँ-बाप की परवाह है और न कुल-वंश के गौरव की परवाह, न इज्जत का ध्यान है। ऐसी सन्तान तो जन्म के साथ मर जाती तो अच्छा था। आज यह दिन तो नही देखना पड़ता। अब करे भी तो क्या करे। वहॉ पर जा भी तो नही सकते। क्योकि पुलिस का पहरा है। साथ ही सैकड़ो आदमी खड़े है। राजा अपने महलो मे और नगर सेठ अपने मकान मे भीतर ही भीतर घोर चिन्ता से दु:खी हो रहे थे।

शहर में भी चर्चा थी कि 'देखा बड़े घरो का हाल। इन्हे कौन कहे। सामान्य घर होता तो अभी तक बेचारे की दुर्दशा हो गई होती। कोई क्या कह रहा है, कोई क्या कह रहा है। जितने मुह, उतनी बाते।'

इधर जब सामन्तेसन ने बेडिग खोला तो राजकुमारी बाहर आई। राजकुमारी ने कोढ़ी व्यक्ति की जगह एक स्वस्थ श्रेष्ठिपुत्र सामन्तसेन को देखा तो वह चकरा गई और एकदम भयभ्रान्त होकर दूर जाकर खड़ी हुई।' सामन्तसेठ ने कहा- 'अरे प्राणप्यारी ! घबरा क्यो रही हो ? तुम्हारा आशिक सामन्तसेन हूँ मै।'

यह सुनते ही राजकुमारी की ऑखो मे खून उतर आया। उसने कहा- 'चुप रह दुराचारी मै इसलिए यहॉ नही आई हूँ।'

यह सुनकर तो सामन्तसेन भी चकरा गया। क्योंकि तीजा ने तो यह कहा था

कि राजकुमारी आपको चाहती है। पर यहाँ तो माजरा ही दूसरा नजर आ रहा है। वह बोला- 'फिर यहाँ क्यों आई हो ?'

तब मृणालिनि बोली- 'मुझे तो तीजा ने बतलाया कि उसके पति को कोढ़ है। उसे देवी ने दर्शन देकर यह कहा कि मृणालिनि के पैर का स्पर्श हो जाये तो वह ठीक हो सकता है। इसलिए उसके आग्रह पर दयाभाव से यहाँ आई हूँ।'

सामन्तसेन बोला- 'जब तुम्हारी यह स्थिति थी तो तुमने रात्रि को हाथ घुमाकर क्या इशारा किया था।'

मृणालिनि बोली- 'ओ हो ! वह भी कोई ईशारा नही था। वह तो तीजा ने कहा था कि आपके हाथ का स्पर्श पाकर मेरे पति का कोढ़ ठीक हो जाएगा। इसलिए उसके बार-बार कहने पर किया था।'

एक-दूसरे की बातें सुनने के बाद ऐसा लगा कि उन्हे परस्पर तीजा द्वारा गुमराह करके यहाँ पहुँचा दिया गया है।

खैर...। जो होना था सो हुआ। अब जब वे बाहर निकलने की सोचने लगे। तब तक तो बाहर काफी भीड़ एकत्रित हो चुकी थी। पुलिस का पहरा लग चुका था और भारी चर्चाएं हो रही थी।

यह सब देखकर उन्हे तो काटो तो खून नही, ऐसा लगने लगा। यद्यपि राजकुमारी सही होते हुए भी प्रशसा की भूख में आकर फँस गई। अव तो उसे अपनी गलती का अहसास होने लगा। लेकिन स्थिति इतनी विगड़ चुकी थी कि उसकी सच्चाई कोई नही मानेगा। अब तो जिन्दगी जीना ही मुश्किल हो गया। कलंकित जिन्दगी जीने से मरना श्रेयस्कर लगने लगा।

तीजा ने शहर में पूरी तरह एक ढंग से आग ही लगा दी थी। अब वह अपनी सहेली पीजा के पास पहुँची और बोली- 'सुन ! मैंने तो आकाश के तारे तोड़ने वाला काम कर दिया है और इतना धन माल मैं ले आई हूँ।' पीजा वोली- 'चल ! तेरा काम हो गया। अब मै तुम्हें टूटते तारो को आकाश पर लगाकर अपनी बुद्धि का चमत्कार करके बतलाती हूँ।

यह कहकर पीजा घर से वाहर निकली। उसे पहले तो यह जानना था कि , ने आकश के तारे तोड़ने वाला क्या काम किया है। उसने तीजा को कुछ पूछा । था नहीं, क्योंकि यह सव उसे अपनी प्रतिभा से जानना था। उसे ज्यादा मेहनत नहीं करनी पड़ी। क्योंकि सामन्तसेन और राजकुमारी के तथाकथित दुराचार की चर्चा गली-गली मे हो रही थी। इसे सुनकर पीजा समझ गई कि यह करामात तीजा की ही है।

क्योकि राजकुमार और श्रेष्ठिपुत्र, दोनो आकाश के तारे के समान है, जिन्हें बरगलाकर इसने भटका दिया। जिसका मतलब था कि उसने नही होने वाला काम करके दिखा दिया है। यह आकाश के तारे तोड़ना हुआ। खैर मुझे अब आकाश मे पुनः तारे लगाकर अपनी चतुराई का परिचय देना है।

पीजा सीधी सम्राट के पास पहुँची। सम्राट घोर दुःखी और गमगीन नजर आ रहे थे। पीजा ने जाकर प्रणाम किया और बोली- 'नरनाथ ! क्या बात है ? इतने गमगीन क्यो ?'

सम्राट बोले- 'क्या तुम्हे पता नही ? वह मृणालिनि जिसका नाम लेना भी पाप है। वह सेठ के छोकरे से जा लगी। मुझे तो मुँह दिखाने लायक भी नही रखा।' पीजा बोली- 'राजनपति राजन् ! आप इतने दुःखी न बने। अगर मै राजकुमारी को वापस ले आऊ तो ?'

'तो कोई फायदा नही। जब पूरे शहर मे बदनामी हो गई है तो अब मै राजकुमारी को महलो मे नही रख सकता। यही नही मेरा तो जीना भी दूभर हो रहा है।' राजा ने कहा।

पीजा बोली- 'राजन् ! मै राजकुमारी को इतना सुरक्षित ला सकती हूँ कि किसी को कुछ भी पता नही चले और आपका यश भी निष्कलंक रहे।'

'पीजा ! यदि तुम यह कर दो तो मै तुम्हे सोने से मढ़ दूगा। ले एक सोने का हार तो अभी देता हूँ। यदि मृणालिनि इज्जत के साथ घर आ जाये तो मेरी या उसकी ही नहीं, अपितु सारे देश की आबरू बच जाएगी। नही तो लोगो मे अभी से चर्चा हो रही है कि जिस देश की राजकुमारी ऐसी है, उस देश की अन्य कन्याएँ कैसी होगी ? पीजा ! मुझे तुम्हारी अक्लमंदी पर भरोसा तो है, पर यह काम भी उतना ही कठिन है। पता नहीं, तुम इस काम को कैसे अजाम दोगी। यह समझ मे नहीं आ रहा है।'

पीजा बोली- 'राजन्! आप अब देखते रहिये मेरी बुद्धि का करिश्मा।'

पीजा राजा के यहाँ से निकली और सीधी नगर सेठ लक्ष्मीचद के पास पहुँची। उनका हाल भी बेहाल था। उन्हे अपने बेटे की हरकतो पर बहुत दुःख था। उन्हे लग रहा था कि राजा सारी सम्पत्ति को जब्त करके सारे परिवार को शूली पर चढ़ा देगा। बाहर से आ रहे अनेक तरह के निंदा के वचन सेठ लक्ष्मीचंद को भीतर तक चीरते जा रहे थे। इसी बीच पीजा बोली- 'सेठ साहब! इतने परेशान क्यो है ?' सेठ बोले- 'परेशानी पूछती है। ऐसी बदनाम जिन्दगी से तो अब मर जाना श्रेयस्कर है। देख उस पूत को, जो ऊँचे-ऊँचे ख्वाब देखता है।'

पीजा बोली- सेठ सा. जो हो गया, उसे आप कहे तो बेआबरू हो रही इज्जत को मै बचा सकती हूँ।' 'यह कैसे ?' सेठ सा. एकदम बोल पड़े।

'यह तो आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिये। देखते जाईये मेरी बुद्धि का जादू।' पीजा ने कहने पर सेठ साहब बोल- 'ले पीजा ले यह सोने की चैन। तेरी वाणी सफल हो। यह हो जाये तो बस मेरी जान बच जाएगी। पर यह होगा कैसे ?'

पीजा बोली- 'यह आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिये। बस आपको तो एक काम करना होगा।'

सेठ बोला- 'वह क्या ?'

पीजा बोली- 'इतना ही कि आप एक रथ सजा दीजिये। उसमे आपकी पुत्रवधू (सामन्तसेन की पत्नी) को एक सरीखी दो ड्रेस पहना दीजिये। हर चीज दो पहने हो यह ध्यान रहे। उसके बाद उसे रथ मे बैठा दीजिये। रथ के पीछे दो चार घोड़ा गाड़ी में मिश्री की बोरियां आगे आगे रखवा दें और पीछे 100 बोरी मिट्टी की भरवाकर रखवा दे। दो-चार नौकर साथ मे भेज दीजिये। बस फिर देखिए, दो घटे मे काम हो जाएगा।'

मरता क्या न करता। डूबते को तिनके का सहारा। सेठ ने तुरन्त-फुरन्त सारा काम करवा दिया। पुत्रवधू को भी डबल ड्रेस पहनाकर रथ में बिठा दिया और दूती जैसा कहे वैसा करने का आदेश दे दिया। इधर दूती पीजा भी खूब बन-ठनकर तैयार हो गई। एक धनवान सेठानी का रूप बनाया। लाखो रुपये के गहने सेठ से कुछ समय के लिए लेकर पहन लिए और रथ में आगे आकर बैठ गई। रथवान को आदेश दिया कि 'जिधर सेठ का बंगला है, उससे दो गली पहले के स्थान पर रथ को ले चलो। जहाँ से 20-30 घर बाद वह बंगला आ जाये।' रथवान ने वही किया। वहाँ पहुँचने पर पीजा ने बहू को आदेश दिया कि 'लो यह चांदी का कटोरा। इसमे नौकरो ने मिश्री भर दी है। इसे ले जाकर इन घरो मे देकर आओ। यह कहना कि हमारी सासूजी काशी, मथुरा, वृन्दावन तीर्थ करके घर लौट रही है। रास्ते मे जो भी घर आता है, वे प्रसाद देते हुए जाती हैं। अतः आपको भी लेना है।'

बहू तैयार हो गई। प्रसाद, फिर वह भी चादी के कटोरे मे। कौन न ले ? घर वाले फटाफट लेने लगे। लोग भी देखने लगे। सेठानियाँ तो बहुत देखीं, पर उदार दिलवाली सेठानी तो पहली बार देख रहे हैं। सेठानी चांदी के कटोरे मे मिश्री हर घर में देती हुई उस बंगले तक पहुँच गई, जिसमें राजकुमारी और सामन्तसेन बन्द थे। बाहर पुलिस का पहरा था। उस फार्म हाउस मे मिश्री देने के लिए पुलिस मना करने लगी।

सेठानी ने कहा- 'अन्दर क्यो नही जाने दे रहे है।' पुलिस बोली- 'बुढ़िया ! दिखता नही है। अन्दर राजकुमारी और श्रेष्ठी पुत्र सामन्तसेन है। उनकी चौकसी की जा रही है।'

सेठानी बोली- 'हमे उससे क्या। हमे तो केवल एक कटोरा मिश्री भीतर मे पहुँचाना है। क्योकि मै तीर्थयात्रा करके आ रही हूँ। मेरा यह नियम है कि रास्ते मे हर घर मे मिश्री सहित कटोरा देना।' पहरेदार बोले- 'मॉजी ! इस मकान पर तुम नही दे सकती। यह बद कर रखा गया है।'

मॉजी बोली- 'ऐसा करने पर तो मुझे तीर्थ का पूरा लाभ नही होगा।' यों कहते हुए मॉजी ने चुपके से पॉच-पॉच स्वर्ण मुद्राएँ पहरेदारो की जेब मे डाल दी। फिर क्या था। सोने की चमक क्या नही कर सकती है। पहरेदारो का मन भी पीलिये को पाकर पिल-पिला हो गया। ठीक उसी वक्त सेठानी ने कहा- 'अरे भाईयो ! मुझे नही तो मेरी इस बहू को अन्दर जाने दो, बस दो ही मिनट मे यह कटोरा अन्दर जाकर दे आएगी।

पहरेदारो को सोना जो मिल गया था। उन्होने कहा- 'अच्छा, जाओ जल्दी आ जाना।' सेठानी बोली- 'बस यह गई और वो आई।' यो कहते हुए अपनी बहू से कहा जा जल्दी से अन्दर जाकर तुरन्त चले आना। देख सावधान रहना, देरी नही करना। बहू को पहले से ही सबकुछ समझा रखा था।

पहरेदारो ने बगले का दरवाजा खोला। बहू अन्दर गई। उसे मिश्री तो क्या देना थी, उसने जो दो ड्रेस पहन रखी थी, उस मे से तुरन्त एक उतारी और राजकुमारी को पहनाई। राजकुमारी को भी सारी बात इसी बीच समझा दी। राजकुमारी भी बहू की ड्रेस पहनकर ठीक वैसी ही लगने लगी। अब वहॉ पर सामन्तसेन की पत्नी तो रह गई अन्दर और उस स्थान से वैसे ही कपड़े पहनकर राजकुमारी बाहर आ गई। घूघट होने से एव वैसे ही कपड़े होने से जल्दी-जल्दी मे पुलिस वालो को कुछ पता नही चल सका। सेठानी बहू के रूप मे राजकुमारी को रथ मे बिठा, आगे बढ़ी। आगे भी 20-30 घरो मे मिश्री बाटती चली गई। वहॉ से थोड़ा आगे निकल जाने के बाद मिश्री बाटना तो किया बंद और सेठानी का रूप धरने वाली पीजा ने रथ को दौड़ा दिया। वह सीधी महलो मे जा पहुॅची और सुरक्षित राजकुमारी को महलो मे लाकर राजा को सुपुर्द कर दिया। राजा चन्द्रसेन भी पीजा की चतुराई पर बहुत खुश हुआ और उसे पॉच सेर सोना इनाम दे दिया।

पीजा ने इधर सेठ लक्ष्मीचन्द को भी जाकर सूचित किया- 'सेठ साहब अब

घबराने की कोई आवश्यकता नहीं, राजकुमारी को तो मैंने राजमहलों में पहुँचा दिया है। अब उसके स्थान पर आपकी पुत्रवधू ही वहाँ पर है।'

इतना जोखिम भरा काम इतना सुरिक्षत हो जाएगा, सेठ को इसकी कतई आशा नहीं थी। सेठ बहुत खुश हुआ। पीजा को भारी इनाम देकर विदा कर दिया। पीजा भी टूटे हुए आकाश के तारो को जोड़कर तीजा के पास पहुँच गई।

इधर सेठ लक्ष्मीचन्द अब मूंछो पर ताव देते हुए अपने बंगले पर पहुँचा और पुलिस को ललकारने लगा- 'तुम लोगों ने मेरा यह बंगला क्यो घेर रखा है।' पुलिस इन्सपेक्टर बोला- 'अरे सेठ साहब ! जबान संभाल कर बोलिये ! तुम्हारे सपूत ने राजकुमारी को अन्दर रखा है। इसलिए यह चौकसी दी जा रही है।'

सेठ- 'तुम लोगो का दिमाग तो खराब नहीं हो गया है। राजकुमारी जो महलो में रहने वाली, चरिन्दा इन्सान की बात तो दूर परिन्दा भी जल्दी से पर नही मार सकता। इतना सशक्त पहरा है। वह वहाँ से यहाँ कैसे आ सकती है। तुम लोग भी कैसे हो ? किसी को बदनाम कर पैसा ऐठना ही सीखा है या जनता की सेवा भी करते हो। चलो हटो यहाँ से। लोगों को भी किसी की बदनामी करने में मजा आता है।'

सेठ की बात सुनकर पुलिस वाले बिगड़ गए। उन्होने सेठ को चमकाया- 'अब तुम्हारे बुरे दिन आ गए है। शूली पर चढ़ा दिये जाओगे। सारी सम्पत्ति भी जब्त हो जानी है।'

'शूली पर मुझे चढ़ाएंगे या तुम जैसे पागलों को, यह तो समय बतलाएगा।' सेठ ने जवाब दिया, क्योंकि उसे अब किसी प्रकार का डर तो था नही।

सेठ ने कहा- 'मेरे बंगले के अंदर तो मेरा बेटा और उसकी पत्नी है, जो जब-तब यहाँ घूमने के लिए आते रहते है। तुम लोगो ने उन्हे ही घेर कर बदनामी शुरू कर दी है।' पुलिस वाले बोले- 'यह नही हो सकता। तुम हमे बरगला रहे हो। यदि ऐसा है तो खोलकर देख लो।'

तब पुलिस वालों ने दरवाजा खोला और अन्दर झांककर देखा तो अन्दर सेठ लड़का सामन्तसेन और उसकी पत्नी बैठे है। बाहर खड़ी भीड़ को विश्वास नहीं रहा था। तब सामन्तसेन और उसकी पत्नी बाहर आए। उन्हे देखकर सब समझ गए। 'अरे यह तो पति-पत्नी है। यह तो आ ही सकते है घूमने। हम कहाँ भरमा गए कि अन्दर राजकुमारी है। अब तो जैसे सब को साँप सूंघ गया। सभी खिसकते नजर आए। अब तक सभी शेर की तरह दहाड़ रहे थे। अब भीगी बिल्ली की तरह शात हो गए और खिसकते चले गए।

सेठ का सीना फूल गया था। उसकी इज्जत जो बच गई थी। शहर मे फैली भ्रान्ति के बादल बिखर गए। राजा और सेठ की शान बदल गई। तीजा और पीजा का चमत्कार सब देख चुके थे।

❑❑❑

53. तिरिया चरित्र और राजा भोज

धारा नगरी के राजा भोज प्रजा के सुख-दुःख का पूरा ध्यान रखते थे। कई बार रात्रि मे भी वेष बदलकर शहर मे वस्तुस्थिति की जानकारी के लिए घूमा करते थे। एक बार रात्रि को वे घूम रहे थे। ऐसे मे उन्हे एक औरत कही जाती हुई दिखलाई दी। उसकी चाल-ढाल देखते हुए राजा भोज को उसके अच्छे लक्षण नजर नही आए। राजा भोज उसका पीछा करने लगे, यह सोचकर कि देखते है, यह कहाँ जाती है।

वह औरत बड़ी निर्भीकता के साथ आगे-आगे बढ़ती जा रही थी। चलते-चलते वह शहर के बाहर जगल मे पहुँच गई। जगल मे भी और आगे बढ़ी तो सामने सिह आ गया। फिर भी वह नही घबराई, बल्कि चण्डी का रूप धारण करते हुए सिंह को तलवार से मार गिराया। फिर और आगे बढ़ी तो नदी के किनारे पहुँची और नदी मे कूद पड़ी, फिर तैरने लगी। राजा भोज को यह सब देखकर बहुत आश्चर्य हो रहा था। राजा भोज भी धीरे-धीरे नदी मे उतर गए थे, उसकी चौकसी करने के लिए। वह औरत तैरते-तैरते नदी के उस पार पहुँची। वहाँ पर धूणी तपाते एक सन्यासी के पास गई। ज्योही सन्यासी ने उसे देखा, त्योही गुस्से मे उसकी चोटी पकड़ते हुए बोला- 'रडी ! आज इतनी देर से कैसे आई ?' वह बोली- 'आज घर पर मेरे पतिदेव आ गए थे। इसलिए उन्हे सुलाकर आने मे देर हो गई।'

देर से आने के कारण सन्यासी को गुस्सा तो आ ही रहा था। उस औरत को अपनी तरफ घसीटते हुए उसकी ओढ़ी हुई नई चूनरी को खीचा और आग मे फेक दिया। फिर वह औरत और सन्यासी कामाचार मे निरत हो गए। राजा भोज दूर से स्त्री का चरित्र और सन्यासी का ढोग देखते रहे। उन्हे औरत के इस रूप पर बड़ा आश्चर्य हो रहा था। कुछ देर के बाद वही औरत वहाँ से निकली और नदी मे तैरकर इस पार आई और अपने घर की ओर बढ़ चली। राजा भोज छाया की तरह उसके पीछे लगे रहे। जिस घर मे उसने प्रवेश किया, उसका नम्बर नोट कर राजा भोज अपने महलो

की ओर लौट चले। रात भी काफी बीत चुकी थी। राजा साहब भी थक चुके थे। महलो मे आकर कपड़े बदले, कुछ देर आराम किया। सवेरे उठने के बाद आवश्यक कार्य से निवृत्त होकर मंत्री को बुलाया और उसके सामने उस औरत का मकान नम्बर बताते हुए पूछा कि 'यह किसका मकान है ?' मंत्री ने नम्बर देखकर कहा कि 'राजन् ! यह तो अपने शहर के जाने-माने सेठ बिहारीलाल के मकान का नम्बर है। वह कल ही परदेश से लौटे है। काफी पैसा कमाकर आए है। परदेश से बेशकीमती चुनरी लाए थे, जो आपको कल दोपहर सभा मे रानी साहिबा के लिए भेट की थी।'

राजा भोज बोले- 'अच्छा-अच्छा वह चुनरी तो बहुत सुन्दर थी भई। जब मै उसे महलों मे ले गया तो महारानी बहुत खुश हुई। पर छोटी रानी, वह भी मुझे प्रिय है। जब उसे पता चला तो वह भी माँगने लगी, जबकि मरे पास तो एक ही थी और वह मैने बड़ी रानी को दे दी। दूसरी कहाँ से लाता। पर छोटी रानी तो मान ही नहीं रही हैं, जिद पर अड़ी हुई है कि मुझे तो ऐसी ही चुनरी चाहिये। सेठ बिहारीलाल को बुलाओ, उनसे पूछते है।'

सेठ बिहारीलाल को बुलाया गया। राजा ने उससे कहा- 'बिहारीलाल ! तुम कल एक चुनरी भेट कर गए थे। वह बहुत अच्छी थी। ऐसी चुनरी तुम्हारे पास और है क्या ? वह बोला- 'हाँ राजन् ! एक और है। एक तो मै महारानी साहिबा के लिए लाया था, जो आपको भेट कर दी और एक मै अपनी सेठानी के लिए लाया हूँ।'

राजा बोले- 'सुनो ! जो दूसरी चुनरी तुम्हारे पास है, वह तुम हमे बेच दो। जितना भी पैसा चाहिए, उतना ले लो, पर चुनरी दे दो।' सेठ बड़ा खुश होता हुआ बोला- 'राजन् ! वह भी ले लीजिये। हमारे तो कोई बात नहीं, दूसरी और ले आएगे। बनिये का बेटा तो भाणे पर आई रोटी तक काम पड़ने पर बेच देता है। राजा बोले- 'तो फिर वह चुनरी भी तो लाईये।'

'अभी लाता हूँ।' ऐसा कहकर सेठ उठा और अपने घर पर पहुँचा तथा सेठानी को कहा कि 'जो चुनरी कल तुम्हें दी थी, वह मुझे दे दो। तुम्हारे लिए उससे भी बढ़िया ले आएंगे।' लेकिन अब चुनरी हो तो देवे। वह तो सन्यासी द्वारा कल रात छीनकर आग में फेंक दी गई थी। सेठानी बोली- 'पतिदेव ! वह चुनरी तो आपकी है। अब वह तो मै ही रखूंगी। सेठ बोला- 'नही, अभी तो तुम दे दो। राजा माँग रहे है। फिर दूसरी नई लाकर तुम्हे दे देंगे।' सेठानी बोली- 'प्राणनाथ ! वह चुनरी तो मुझे बहुत पसंद है, अब उसे नहीं दूंगी'

तपाक से बोले- 'सेठानी ! समझने की कोशिश कर। वह राजा ने मंगाई

है। अतः उन्हे तो देना ही पड़ेगा और उसके प्रतिफल मे हमे भारी फायदा भी होने वाला है।'

दोनो आपस में बात कर ही रहे थे कि इतने मे तो राजा के यहाँ से एक सिपाही भी आ गया, यह कहने के लिए कि राजा चुनरी मँगा रहे है।

अब सेठ बिहारीलाल सेठानी पर बार-बार चुनरी देने के लिए दबाव डालने लगे। आखिर सेठानी को चुनरी लाने उठना पड़ा, जबकि चुनरी तो उसके पास थी नही। फिर वह मकान से बाहर निकलकर ऊपरी खण्ड पर जाने लगी। उसे विचार आ रहा था कि अब क्या करू और क्या नही। कुछ सूझ नही रहा है। इतने में उसे एक बिल्ली दिखलाई दी। उससे घबराकर नीचे गिर गई और बेहोश होने का नाटक करने लगी।

बिचारा सेठ हड़बड़ाते हुए बाहर आया। बाहर आकर पत्नी को इस प्रकार बेहोश देखा तो घबरा गया कि बिल्ली को देखकर सेठानी डर गई है, जिससे बेहोश हो गई। बेचारा सेठ आनन-फानन उसे होश मे लाने की कोशिश करने लगा। लेकिन होश आ ही नहीं रहा था। इतने मे राजा भोज की ओर से भेजा हुआ नौकर फिर आ गया कि 'राजा साहब चुनरी मगा रहे है।'

बार-बार की माँग को देखते हुए सेठ भी झुझला गया। वह बोला- 'राजा साहब को तो चुनरी की पड़ी है। मेरी तो एक ही सेठानी है, वह भी चुनरी लेने ऊपर जाते वक्त बिल्ली को देखकर बेहोश हो गई है। मै इसका इलाज कर रहा हूँ। जब तक वह ठीक नही हो जाती, तब तक चुनरी नही मिल सकती।'

नौकर ने जाकर राजा साहब को सारी बात बतलाई। राजा भोज समझ गए कि यह सब तिरिया-चरित्र है। चुनरी है ही नही तो देगी कहाँ से।

राजा भोज ने सेठ से कहलवाया कि यदि सेठानी को होश नही आया हो तो राजा भोज को होश मे लाने का मंत्र आता है। वे आपके घर आकर मत्र पढ़कर सेठानी को होश मे ला सकते है।

इधर सेठानी को बहुत प्रयत्नो के बाद भी जब होश नही आया तो राजा भोज के समाचार पाकर सेठ साहब बोले- 'राजा साहब, जरूर पधारें। इससे मेरी कुटिया भी पवित्र हो जाएगी और साथ ही सेठानी भी ठीक हो जाएगी।'

अवसर पाकर राजा भोज, सेठ के घर आए और जहाँ सेठानी वेहोश पड़ी थी, उधर गए। उसके बाहरी लक्षणो से बनावटी बेहोशी स्पष्ट हो रही थी। जिसे देखकर राजा भोजराज ने एक दोहा सुनाया-

सिंह मारत जलती रत, मच्छा घालत घाव।

मै थने पूछूं हे सखी, कैसी डरी बिलाव।।

सेठानी ने ज्योही बनावटी बेहोशी मे यह दोहा सुना, अचम्भित हो गई। क्योकि इस दोहे मे कल रात की सारी घटना अंकित थी। सेठानी को लगा कि राजा भोज ने कल वाली घटना अपनी आँखो से देख ली है। इसलिए जानबूझकर चुनरी मॉगी जा रही है। अन्यथा राजरानियो के सामने ऐसी चुनरियो का क्या महत्त्व। उनके पास तो एक से एक सुन्दर वस्त्र होते है। अब क्या करना। जब राजा को सबकुछ पता ही चल गया है तो उनसे अब कुछ छिपाया नही जा सकता। अतः सेठानी से सही-सही बात बताने के उद्देश्य से कहा-

राजा भोज चतुर सुजान, बओत्तर कलानिधान।

वो तो चून्नर वही गई, कहो तो तज दूं प्राण।।

सेठानी की बात को राजा भोज समझ गया और यह भी स्पष्ट हो गया कि गलती हो गई। अब यदि इस दंड स्वरूप आप प्राण तक लेते हो तो वह भी देने को तैयार हूॅ। अर्थात् मुझे अपनी गलती का बहुत पश्चात्ताप है। अब तो जो हो गई, सो हो गई।

राजा भोज ने भी सोचा- 'खानदानी घराने की सेठानी है। अव इसे मै अगर बेआबरू करूगा तो अच्छा नही रहेगा। इससे धारा नगरी के श्रीमतो की इज्जत पर भी प्रश्न खड़ा हो जाएगा। अतः इस वात को यहाँ दवा देना ही उचित है। वैसे ही हमारा लक्ष्य पापी को नहीं पाप को खत्म करने का है।' यह सोचकर राजा भोज ने वात को एकदम बदल दी और सेठ की और मुखातिव होकर वोले- 'सेठ साहव ! मैंने मत्र कर दिया है। वैसे तो सेठानी साहिवा होश मे आ गई है। दो-चार घटे मे पूरी तरह मे आ जाएगी। आप किसी तरह का विचार न करें। अव हमे चुनरी की भी जरूरत नही है। वैसी चुनरियॉ लाने वाला व्यापारी मिल गया है। इस प्रकार कहते हुए राजा ने विदाई ली। सेठ को भी शान्ति प्राप्त हुई है।

□□□

54. आत्मलोचन का आदर्श

एक बार निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति के सवाहक आचार्य धर्मघोष ने अपने शिष्य-समुदाय के साथ ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए विशाला नगरी मे चातुर्मासार्थ भव्य प्रवेश किया। हजारो की सख्या मे श्रद्धालुजन उमड़ पड़े। सभी विविध रूपो मे आचार्य-प्रवर का स्वागत कर रहे थे। आचार्य-प्रवर शिष्यो से सपरिवृत हो नगर के बाहर ही कामवन नामक उद्यान मे स्थित एक स्वतत्र उपखण्ड मे यथा आज्ञा लेकर विराज गए। दूसरे दिन से धर्मदेशना भी प्रारभ कर दी। धर्मदेशना मे भारी सख्या मे लोग आने लगे। चातुर्मास लगने मे दो-तीन दिन ही बाकी थे। जिन साधुओ को कपड़ा, डोरा, धागा आदि लेना हो, वह सब चातुर्मास से पहले ही लिया जा सकता है, बाद मे नही। अतः साधुजन गृहस्थी घरो मे एषणीय वस्तुओ की गवेषणा करने मे लगे थे। यही नही, छोटे संत गोचरी पानी आदि लाने मे भी लगे थे।

इनमे एक सबसे छोटे सत, जिनका नाम सुव्रतमुनि रखा गया था, वे भी उस दिन पानी लाने गए हुए थे। वे भी छोटे-बड़े घरो मे जाते हुए एक बहुत बड़ी हवेली मे प्रवेश कर गए। अन्दर जाने पर कोई दिखलाई नही दिया तो और भी अन्दर गए। फिर भी कोई दिखलाई नही दिया, तब अन्दर किसी प्रकोष्ठ मे प्रवेश किया। तब उन्हे एक सर्वांग सुन्दर नवयौवना दिखलाई दी। उसका नाम यशोदा था। पर ब्रह्मचारी साधक के लिए सब कोई एक समान है। उनकी दृष्टि चर्म देह पर न होकर आत्मा के सौन्दर्य पर होती है। सुव्रतमुनि ने पूछा- 'बहिन ! एषणीय प्रासुक उपलब्ध है क्या ?

पर बहिन की दृष्टि आत्म-सौन्दर्यपरक न होकर देहपरक थी। उसने नवयुवा सुव्रतमुनिजी के सुन्दर बलिष्ठ एव सर्वांगो से परिपूर्ण चित्ताकर्षक देहश्री को देखा तो एक ही दृष्टि मे उन पर न्यौछावर हो गई, मोहित हो गई। वह अपलक भाव से निहारती जा रही थी। मुनिश्री के बोलने पर उसका ध्यान भंग हुआ और वह बोली- 'हॉ महाराजश्री ! आपको प्रासुक पानी ही नही, सबकुछ मिलेगा।'

मुनिश्री इधर-उधर देखकर बोले- 'क्या इस भवन मे तुम अकेली रहती हो और कोई नहीं। अकेली बहिन से आहार-पानी लेना नहीं कल्पता है। या तो एक भाई होना चाहिये या फिर दो बहिने होनी चाहिये। वैसा न होने पर हम बिना कुछ लिए वापस लौट जाते है।'

नवयौवना यशोदा ने देखा कि ये कही हाथ मे आने पर भी यो ही नही चले जाएं, इसलिए वह बोली- 'मुनिश्रेष्ठ ! आपकी बात उचित है। मै अभी एक भाई को

बुलाती हूँ। ऐसा कहके वह मुख्य द्वार तक गई। भाई को तो उसे क्या बुलाना था। उसने सबसे पहले मुख्य द्वार बन्द कर दिया। उस पर ताला लगा दिया, ताकि मुनि उसकी बिना इच्छा के बाहर नही निकल सके।' अब वह पहुँची महाराजश्री के पास और बोली- 'मुनिवर ! यह यौवन और इतनी सुन्दर देहश्री की शोभा इस कांटे के पथ पर चलकर बर्बाद करने के लिए नही है। अतुल्य पुण्य के उदय से आपको ऐसी सुषमा मिली है। अतः इसका तो स्वच्छंद भाव से उपयोग करके एन्द्रिय सुख लेना चाहिये। आप क्यों इस कष्टदायी साधु जीवन मे उलझ गए है ?'

युवती की कामुकता भरी बाते सुनकर अनुकूल परीषह होते हुए भी मुनिश्री जरा भी विचलित नही हुए। वे अपनी सयम की सुरक्षा के साथ बोले- 'बहिन ! यह सत्य है कि मानव तन अनन्त पुण्यवानी का संचय किये बिना नही मिलता, पर तन को सुरक्षित करने वाली चमड़ी कैसी भी क्यो न हो, कुरूप हो या सुरूप, इससे क्या फर्क पड़ता है। क्योंकि हर चमड़ी के भीतर वह खून, महल है। फिर विनाशी शरीर पर आसक्त हो पशुओं की तरह कामवासना में लगाना कोई बुद्धिमता नही है, क्योंकि कब यह शरीर रोगाकीर्ण हो जाये या नष्ट हो जाये, कुछ पता नही है।'

यशोदा पर तो काम का भूत सवार था। उसे महाराज की हितकारी शिक्षा भी अच्छी नही लग रही थी। वह बोली- 'देवोपम राजकुमार ! मै आपके चरणो की प्यासी सदा-सदा के लिए आपकी सेवा में समर्पणा भाव से वनी रहूंगी। यह सारा ऐश्वर्य सम्पदा आपके चरणो में न्यौछावर है। आप इन स्वर्गिक सुखो का अनुभव करिये। यही सवकुछ है। यह सार-निसार वाली वाते भोले-भोले लोगो को समझाने की हो सकती है, हकीकत नही है।'

मुनिश्री को अधिक देर तक मकान मे खड़े रहना अनुचित लग रहा था। अतः वे विना जवाव दिये ही मुख्य द्वार की ओर मुड़े तो देखा वह वद हो चुका है ॅर ताला लगा है। अव तो महिला की कुत्सित भावना का स्पष्ट रूप उजागर हो गया था। मुनिश्री ने देखा, इसे समझाये विना द्वार खुलने वाला नही है। अतः वर्तमान हालत को देखते हुए महिला को समझाना ही उचित समझकर सुव्रतमुनि वोले- 'वहिन ! ऐन्द्रिय कामभोग क्षणिक सुख कराने वाले है और वहुत समय तक दुःख देने वाले है। भगवान महावीर ने फरमाया है-

खणकित्त सुक्ता, वहुकाल दुक्खा

अर्थात् यह कामभोग क्षणभर सुख देने वाले और वहुत काल तक दुःख देने वाले है। कोई भी इन्द्रिय से पाया जाने वाला अनुकूल विषय सुख का आभास करा

सकता है। वह भी अज्ञानियो को। ज्ञानियो की दृष्टि मे तो वह भी कुछ भी सार देने वाला नही है। लेकिन इन्द्रियो से प्राप्त वह विषय अज्ञानियो को प्रथम बार तो सुख दे सकता है। लेकिन उसी विषय का बार-बार उपभोग करने पर वह भी दु:खदायी बन जाता है। यदि हकीकत मे इन्द्रियो के विषयो मे सुख होता तो प्रथम बार के उपयोग मे आने वाले सुख की तरह लगातार बार-बार उपभोग करने पर सुख मे दुगुना, तिगुना, चौगुना विकास होना चाहिये था। जैसे एक मजदूर अतिरिक्त मजदूरी करता है तो उसे दुगुना लाभ मिलता है। पर इन्द्रिय विषयो मे इसके विपरीत देखा जाता है।

प्रभु महावीर ने फरमाया कि इस तन के भीतर आत्मा का ध्यान करे। देह निरपेक्ष, आत्मसाधना करने पर सच्चे सुख का स्थायी रूप से विस्तार होने लगता है। आम के मिठास के सामने निम्बोली के मिठास की कोई बराबरी नही। उससे भी ज्यादा भिन्नता है आत्मा के सुख और वैषयिक सुख मे। अत: मै तुमसे भी यही कहना चाहता हूॅ कि सम्यक् भाव प्राप्त करके आत्मसुख के जागरण मे लगो तो यह सब सुख फीके नजर आने लगेगे।'

कहते है कि कामान्ध व्यक्ति को हितकारी बात भी अच्छी नही लगती। उस महिला का भी यही हाल था। उस पर मुनिश्री के यथार्थ वचन भी असरकारक नही बन रहे थे। वह बोली- 'मुनिश्री ! आपका कहना भी ठीक है। लेकिन आत्मा का सुख प्राप्त करने के लिए वृद्धावस्था बहुत है। अभी जवानी मे तो इन्द्रियो का सुख पाना चाहिये। फिर साधु जीवन भी व्यक्ति इसलिए स्वीकार करता है कि उसे स्वर्गिक सुख प्राप्त हो। तो हे देवोपम स्वामिन! आपको जब स्वर्गिक सुख नही प्राप्त हो रहे है तो फिर यह महाकष्ट भोगने की कहॉ आवश्यकता है ? यह महल और अखूट सपत्ति के साथ मै जो खड़ी हूॅ आपके चरणो की दासी। जिसे पाने के लिये राजा महाराजा भी तरसते है, वह आपके चरणो मे प्रस्तुत है।'

मुनिश्री बोले- 'देखो बहिन ! मौत के आने का कोई समय नही होता। वह बचपन, जवानी, बुढ़ापा; कभी भी आ सकती है। अत: वृद्धावस्था मे साधना करने की सोचकर विषयो मे फॅसने वाला इन्सान, अभी तक आत्मा के सच्चे सुख को समझ नही पाया है। कौन बुद्धिमान आत्मसाधक अपनी जवानी जैसे अमूल्य क्षण को, शरीर को बर्बाद कर कर्मो को बॉधने वाले इन्द्रिय सुख मे लगाएगा। कभी नही। विषयो मे फॅसने वाला इन्सान तो श्लेष्म मे फॅसने वाली मक्खी की तरह कुछ भी न पाकर जीवन समाप्त करने का काम कर रहा है। फिर साधना स्वर्गिक सुखो को पाने के लिए नही की जाती है। वह तो आत्मा के ऊपर जन्म-जन्म से आए कर्मो के आवरण

को दूर करने के लिए की जाती है। आत्मा का सुख ही सच्चा सुख है।'

इतना कुछ समझाने पर भी जब उस महिला पर कोई असर होता नजर नहीं आया तो सुव्रतमुनि ने मौन रखना ही श्रेयकर समझा और वे आँखे बन्द करके शान्तभाव से ध्यानस्थ हो गए।

सुव्रतमुनिजी को ध्यानस्थ देखकर वह महिला बोली- 'प्राणनाथ ! आप यह क्या करने लगे। इधर देखे। मैं आपको भवन के भीतरी प्रकोष्ठ की शिल्पकारिता दिखलाती हूँ।' आदि तरह-तरह से उन्हें आँखे खोलने के लिए प्रेरित करने लगी। लेकिन वह न तो ऑखे खोलते है और नहीं उसकी किसी बात का उत्तर देते है। महिला के बहुत कुछ मिन्नत करने पर भी जब कोई असर होता नजर नही आया तो वह बौखला गई। सोचने लगे- 'अब मै इन्हे छोड़ भी नही सकती। अगर इन्हे जाने दूँ तो ये बाहर जाकर अपने गुरुजी को सारी बात कहेंगे। वे क्या सोचेगे ? फिर यदि समाज के अन्य लोगों के सामने बात कही तो भारी बदनामी होगी। कहेगे, पति तो परदेश गया है और यह महिला साधुजी को फंसाने लगी थी, दुराचारिणी है। ऐसी बदनामी से तो मर जाना ठीक होगा। पर क्यों ? मैं इस साधु को छोडूँ ही क्यों ?

जब उसे लगा कि यह प्रेम की भाषा मे नही समझ रहे है तो उसने भेद नीति से काम लिया और कहा- 'हे भिक्षुक यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो मैं तुम्हारे ऊपर दुराचार का दोष मढ़कर सारे साधु समाज में ही नही, सारे जैन समाज मे बदनाम कर दूंगी। तुम्हारा जीना दूभर कर दूंगी। मेरा कहना मान जाओ। आनन्द मे रहोगे।'

परन्तु वे महासाधक जो सुमाँस की भॉति ब्रह्मचर्य की साधना मे अडिग थे, वे कहाँ विचलित होने वाले। उन्होंने तव एक ही निश्चय कर लिया था मौन। जव कुछ नहीं बोले तो वह महिला और घवराई और चोट खाए सर्प की तरह फुफकारने लगी। चण्डी का रूप धारण करते हुए एक लकड़ी उठा लाई और वोली- 'हे साधु! सीधी तरीके से वात मान जा या फिर देख इस लकड़ी से प्रहार कर तुम्हारा काम तमाम कर दूंगी। लेकिन मौत से निर्भय और साधना के प्रति सर्वतोभावेन समर्पित मुनिपुंगव पर इन वातो का कुछ भी असर नहीं हुआ। वे तो अपने ध्यान मे उसी तरह अविचल खड़े रहे।'

वह नवयौवना सोचने लगी- 'अव इन्हें कैसे समझाया जाये ? जव वोलते नहीं, देखते नहीं, तव कैसे क्या हो ?' आखिर उसने फिर कहा- 'आँख खोलते हो

या फिर लकड़ी का प्रहार करूं।' फिर भी वही मौन। परेशान होकर महिला ने मुनिराज को डराने के लिए ही सही, लकड़ी का एक प्रकार सिर पर कर ही दिया।

सुव्रत अनगार नवदीक्षित सत थे। दीक्षा लिए कुछ ही समय हुआ था। फिर भी साधना के प्रति पूर्ण समर्पित थे। किसी भी बाहरी आकर्षण से दूर कालजयी सत थे। नवदीक्षित होने से सिर अभी-अभी मुडाया था। बाल थे नही। लकड़ी की चोट भी सीधी कपाल पर पड़ी। शान्ति केन्द्र झनझना उठा। मुनिश्री सुकुमार भी बहुत थे। अतः लकड़ी के प्रहार से झटका लगा और वे गिर पड़े। देह मे भारी वेदना होने लगी। मारणांतिक सकट समझकर मुनिश्री ने समाधिरूप होकर सथारा स्वीकार कर लिया। लकडी की चोट कुछ ऐसी जगह लग जाने से वे बच नही पाये। अब उनकी आत्मा अशुचिमय देह पिण्ड का परित्याग कर दिव्य लोक के लिए प्रयाण कर गई।

महिला को लकड़ी की चोट से यह कतई सभावना नही थी कि वे साधु जी इस दुनिया से चले ही जायेगे। लेकिन जब उन्हे मृत्यु प्राप्त देखा तो वह अन्दर तक हिल गई। बहुत घबरा गई। उसका मन अब गहरे पश्चात्ताप मे बदल गया। कुछ क्षण के लिए वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ बन गई। मुश्किल से होश सभाला। उसके सामने एक साधु की लाश जो पड़ी थी। वह तो सोचने लगी- 'अब क्या होगा ? जब लोगो को पता चलेगा कि साधुजी को इसने मारा है तो सब लोग मुझे दुत्कारेगे। हो सकता है मृत्युदण्ड भी मिले। इसी के साथ सारे खानदान की इज्जत कितनी ही पीढ़ियो तक मिट्टी मे मिल जाएगी। मुझे इसकी रक्षा के लिए कुछ तो करना ही पडेगा।'

उस कोमलागी नारी ने साहस किया। जिसने अपने हाथ से एक बर्तन तक नही उठाया था, वही नारी अब अपने हाथ मे कुदाली फावड़ा लेकर अकेली ने मकान के अन्दर ही एक गहरा खड्डा खोदकर सुव्रतमुनि की लाश को उसमे डाल दिया और ऊपर से मिट्टी, चूना, पत्थर डालकर खड्डे को भर दिया। प्लास्टर लगा दिया गया। मुनिश्री की मौजूदगी का कही कोई निशान नही रहने दिया। मुख्य द्वार भी काफी देर से बन्द कर रखा था। कही कोई भ्रम नही हो जाये, तो इत्मीनान के साथ द्वार खोल दिया। अपने आपको पूरी तरह सहज बनाते हुए यशोदा अपने काम मे लग गई।

इधर जब काफी देर हो जाने पर भी नवदीक्षित मुनिश्री सुव्रत उपाश्रय मे नही पहुँचे तो आचार्य धर्मघोष को विचार आया कि 'क्या बात हो गई ?' उन्होने अपने अन्य सतो को संकेत किया। सतो ने इधर-उधर जाकर खोजना प्रारम्भ किया। करीब घटेभर तक उपाश्रय के आस-पास की गलियो मे ढूंढने पर जब मुनि नही मिले तो उन्होने उपाश्रय मे आकर गुरु सेवा में सारी स्थिति रख दी।

आचार्य धर्मघोष कुछ चिन्तित हो उठे। एक तो नवदीक्षित, सब मे लघु होने के कारण अतिशय प्रीति पात्र भी थे। कई वार गुरु की भी किसी-किसी शिष्य पर प्रीति अधिक हो ही जाती है। जवकि गुरु के लिए तो सभी शिष्य समान रूप से कृपापात्र होने चाहिये। पर गुरु भी तो छद्मस्थ होने से कमाधिक्य स्नेह शिष्य पर हो सकता है। तीर्थकरों का सव पर समान व्यवहार होता है। (यह एक आपेक्षिक दृष्टिकोण है)। आचार्यघोष ने श्रावकों को वुलाकर उन्हे सारी स्थिति से अवगत कराया। तव पचासों श्रावक, वनिये महाराजश्री को ढूंढने निकले। दिनभर हो गया खोजते-खोजते कही भी उनका सुराग नही मिला। दूसरे दिन भी श्रावक समाज ने शहर के अन्दर-वाहर चप्पे-चप्पे को छान मारा, परन्तु कही भी सुव्रतमुनि के मिलने के आसार नजर नहीं आए। 3 दिन तक आचार्य भूखे, उपवास करते रहे। उन्हे इस बात का अफसोस हो रहा था कि उनका अन्तेवासी सुशिष्य कहाँ गया है ? सयम से पतित होकर जाने की तो उन्हे कतई संभावना नही थी। तीन दिन तक शिष्य के इस प्रकार चले जाने से आचार्य महाराज ने आहार नहीं किया। इस बात की जैन समाज मे भारी चर्चा थी।

इधर यशोदा के घर पर भी जैन समाज के कई व्यक्ति खोज करने आए थे। लेकिन यशोदा ने वड़ी सफाई के साथ उन्हे यहाँ किसी महाराज के आने की सभावना से इन्कार कर दिया था। लेकिन यशोदा को अपने किये का जबर्दस्त आघात लगा था। उसका मन हर समय भयाक्रान्त, उद्वेलित रहता था। उसे हर समय लगता रहता था कि उसकी चोरी पकड़ी जानी है। उसके अपराध दुनिया के सामने आ गए है। जो उसकी जिन्दगी में जहर घोलते जा रहे है। ये सब विचार उसकी आत्मा को झकझोर देते थे। जब उसे यह ज्ञात हुआ कि शिष्य के इस प्रकार नहीं मिलने से आचार्य धर्मघोष ने तीन दिन से आहार नही किया है, सारा जैन समाज चिन्तित है। यशोदा को लगा इन सबकी अपराधिनी वह है। जिसने मोहान्ध होकर एक होनहार साधु की हत्या कर दी है। ऊपर से अपने पाप को छुपा रही है। स्वयं का अपराध स्वय को खाने लगा। अव उसे चैन नही। खाना-पीना, रहना-सोना; कुछ भी अच्छा नहीं लगता। खुद का पाप ही खुद को खाने जो लगा है। दिन-रात लगातार वेचैनी के वाद उसे लगा कि इस प्रकार एक भंयकर अपराध के वाद यदि आचार्य भी चले गए तो यह दोहरा अपराध होगा। अतः आचार्य महाराज को सवकुछ सच-सच वताने का यशोदा ने निश्चय कर लिया।

मन को मजवूत करके वह उठी और मध्यान्ह में करीव एक वजे, जव लोगों

की आवाजाही कम थी, तब पहुँच गई उपाश्रय मे। आचार्य-प्रवर से एकान्त मे समय माँगा। एक भाई को नजरो मे बिठाते हुए आचार्य-प्रवर ने उस बहिन से बात करना प्रारम्भ किया। बोलो- 'बहिन ! क्या कहना चाहती है।' पहले तो वह फूट-फूटकर रो पड़ी। आचार्य महाराज को लगा कि मन मे कोई बड़ी पीड़ा लगती है। अपराध बोध भारी है। आचार्यदेव ने निश्छल स्नेहसिक्त शब्दो मे उसे संबोधित किया- 'बहिन ! जो भी मन मे हो, सर्वथा सत्य रूप मे प्रस्तुत कर दो। बड़े से बड़े आदमी से गलती हो सकती है। पर गलती को गलती मानकर प्रायश्चित्त लेने वाला इन्सान न रहकर भगवान बन जाता है। जो भी तुम्हारे मन मे हो, बेहिचक बोल दो।'

आचार्यदेव के आश्वासन भरे शब्दो से उसमे साहस का सचार हुआ और उसने अपने पापो को सुनाना प्ररम्भ किया- 'भगवन् ! मै घोर पापिन हूॅ। मेरी जैसी अधम नारी दूसरी नही होगी। मै नारी समाज के लिए कलक हूँ। क्या कहूँ, कुछ कहने का साहस नही हो रहा है। मेरा दिल दिन-रात रो रहा है।'

आचार्यदेव बोले- 'सुश्राविके! आर्त्तध्यान मत करो। अपराध किससे नही होता। सुनो, चरम शरीरी उसी भव मे मोक्ष मे जाने वाले रहनेमि अणगार भी गुफा मे ध्यान साधना करते हुए भी राजमति को देखकर एक बार तो च्युत हो गए। राजा श्रेणिक का राजकुमार नंदीषेण अणगार मास-मास की तपःश्चर्या करने वाला, कठोर तपस्वी होने के बावजूद भी वेश्या के चुंगल मे फँसकर साधुत्व छोड़ बैठा। ऐसे अनेक उदाहरण आगम एवं इतिहास के पृष्ठो पर अकित है; जो कि फिर सभल गए और अपने जीवन को आलोचना, प्रायश्चित्त पूर्वक निखार लिया। अतः जो भी हो धैर्य धरकर स्पष्ट कहो।'

इस बार यशोदा मे साहस का सचार हुआ। यशोदा उस नगर के गणमान्य करोड़ीमल सेठ की पुत्रवधु थी, जिसका पति स्वर्गवासी हो चुका था। वह सर्वाग सुन्दरी थी और बाल विधवा हो गई थी। वैधव्य जीवन बिता रही थी। उस यशोदा ने कहा- 'आचार्यदेव ! अब मै निश्छल भाव से सम्पूर्ण सत्य सुना रही हूँ। आपके लघु सुशिष्य अन्तेवासी नवदीक्षित अणगार सुव्रतमुनिजी, प्रासुक पानी की एषणीय खोज मे मेरे घर पर पधारे थे। मै अन्दर के प्रकोष्ठ मे थी। वे भीतर पधारे, उन्होने प्रासुक पानी की याचना की। पर मै उनके सुन्दर रूप पर मोहित हो चुकी थी। उस समय मेरे भवन मे कोई नही था। नौकर-चाकर भी छुट्टी पर थे। मैने मुख्य द्वार बन्द कर दिया और उन्हे फिसलाने का प्रयास करने लगी।' ....इस प्रकार यशोदा ने किसी भी प्रकार की बात छुपाये बिना सारी सच-सच बात बता दी और लकड़ी के

प्रहार से उनके प्राण चले गए, लाश को खड्डे में डालकर भर दिया; आदि सबकुछ स्पष्ट सत्य वतला दिया। आचार्यदेव वड़ी शान्त व गम्भीर मुद्रा में यशोदा की आलोचना श्रवण कर रहे थे। उन्हें यह सब सुनकर सुखद आश्चर्य हुआ। इसका कारण था कि उन्हें इस वात का गम नहीं था कि मेरा शिष्य जीवित है या मर गया है। जाना तो सव को एक दिन है ही, पर उन्हे इस वात का अत्यधिक गौरव हुआ था कि मेरे अन्तेवासी शिष्य ने संयम की रक्षा के लिए अपनी कुर्वानी दे दी और अनुकूल-प्रतिकूल, दोनों उपसर्गो को समभाव से सहन कर लिया। आचार्यदेव की आँखो मे सात्विक चमक उभर आई।

इधर यशोदा का हाल वेहाल हो रहा था। उसने कहा- 'गुरुदेव ! मेरा क्या होगा ? मेरे जैसी पापिनी को तो शायद नरक में भी स्थान न मिले। मैने घोर पाप किया है। मेरा भी उद्धार होने का कोई मार्ग है ?'

आचार्यदेव बोले- 'सुश्राविके ! ऐसा मत कहो ! तुम्हारा भी उद्धार हो सकता है।' 'वह कैसे ? जरूर फरमाईये।' यशोदा ने कहा।

आचार्यदेव वोले- 'वहिन ! जो होना था, सो हो गया। तेरे दोषो को शुद्ध करने के अनेक उपाय है। जप, तप, आत्मालोचना; बोलो, तुम क्या करना चाहती हो ?'

यशोदा- 'गुरुदेव ! आप जो भी आदेश देंगे, वह मै करने को तैयार हूँ। यदि आप अग्नि प्रवेश का भी हुक्म दे तो भी मै सहर्ष तत्पर हूँ।'

आचार्यदेव वोले- 'वहिन ! यद्यपि अपराध वड़ा है और उसे धोने के लिए तुम्हारा आत्मबल भी वड़ा है। जिस प्रकार तुमने मेरे सामने आलोचना की है, क्या उसी प्रकार तुम सभा के वीच मे भी सवके सामने यह घटना यथावत् सुना सकती हो ?'

'गुरुदेव ! अवश्य ! यदि इससे मेरे पाप धुलते हो तो अवश्य सुना सकती हूँ। जब मैने इतने संगीन पाप किये है तो मुझे अव मेरी निन्दा, अपयश का कोई भय नहीं। बस मेरे पाप धुलने चाहिये।'

आचार्य महाराज ने कहा- 'फिर ठीक है। कल सवेरे नौ वजे काली साड़ी पहनकर प्रवचन स्थल पर आ जाना'

इधर आचार्यदेव ने चतुर्विध संघ को सूचित कर दिया अव सुव्रत अणगार की खोज करने की जरूरत नही। वह एक दृष्टि से मुझे मिल गया है। सभी श्रावको और श्रमणो को इस वात की उत्सुकता जागी। आचार्यदेव फरमा रहे है कि मुझे मिल गया है, इधर सुव्रत श्रमण नजर ही नहीं आ रहे है। आचार्यदेव असत्य भी नहीं वोल

सकते, क्योकि असत्य का प्रयोग सामान्य साधु भी नही कर सकता। लगता है, इस बात मे कुछ न कुछ रहस्य अवश्य है। लेकिन आचार्यदेव से पूछने का किसी में साहस नही। सघ के वरिष्ठ अनुभवी सुश्रावक ने सभी भक्तो की मानसिक उलझन को समझते हुए आचार्य-प्रवर से निवेदन किया- 'भगवन् ! आपका कहना सत्य है। कही कोई कुशका नही है। पर तीन दिन खोजने मे लगा सारा समाज भी हकीकत जानने का जिज्ञासु है। अनुचित न हो तो हम अल्पज्ञो के लिए स्पष्टीकरण अवश्य फरमावें।

आचार्यदेव ने फरमाया- 'मै आप सबकी मनोभावनाओ को समझ रहा हूँ। इसके लिए आप कल नौ बजे दया पाले। यदि आप उपस्थित हो तो स्थिति का स्पष्टीकरण हो सकता है।

'जैसी आज्ञा गुरुदेव की।' इस प्रकार वाणी को स्वीकार कर सभी श्रावक-श्राविकाएँ अपने निवास की ओर बढ़ चले। पर सबके मन मे भारी कौतूहल था। घर-घर मे यह चर्चा थी कि पता नही, क्या रहस्य है ? कल अवश्य प्रवचन मे जाना है और यह जानना है कि छोटे महाराज कहाँ है ?

समय अपनी गति से चलता रहा और दूसरा दिन भी आया। सवेरे 9 बजे तक प्रवचन पडाल बाहर तक खचाखच भर गया। सभी मे जानने की विशिष्ट प्रकार की उत्सुकता थी। आचार्य-प्रवर व संतगण भी यथास्थान विराज गए। ठीक समय पर खानदानी घराने की बहू यशोदा भी पूरी तरह से काली साड़ी पहनकर उपस्थित हो गई। आचार्य-प्रवर का सकेत पाकर वह उनके पाटे के परिपार्श्व मे आकर खड़ी हो गई। आचार्य-प्रवर के संक्षिप्त उद्बोधन, पश्चात उन्ही का संकेत पाकर अदम्य साहस के साथ यशोदा ने अपने जीवन के साथ बीती घटना को सर्वथा सच्चे रूप मे प्रस्तुत कर दिया।

ज्योही उपस्थित लोगो ने यह सुना कि यह महिला ही छोटे महाराज की हत्यारिन है, तो सब लोग चिल्लाने लगे। कईयो ने पत्थर तक मारने का प्रयास किया। कोई हत्यारिन कह रहा था, कोई दुराचारिणी कह रहा था, कोई उसको स्त्री के नाम पर कलंक बोल रहा था। जिसके मन मे जो आया, वही बोले जा रहा था। उग्र जनता उत्तेजित होकर यशोदा को मारने तक उतारू हो गई। कुछ देर के लिए तो प्रवचन मे हाहाकर मच गया।

आचार्यदेव पूर्ण शान्त मुद्रा में बैठे थे। उत्तेजित भीड़ को शान्त करने के लिए उन्होने एक हाथ ऊपर उठाया। आचार्यदेव के इंगित को समझकर भीड़ पूरी तरह शान्त होकर बैठ गई। उस पूरी सभा मे दो श्रावको के अलावा सभी ने उस महिला की निन्दा की थी। महिला पूर्ण शान्तभाव से सुनती रही।

आचार्य धर्मघोष ने उन दो व्यक्तियो से, जिन्होने यशोदा की निन्दा नही की थी, उनसे निन्दा नहीं करने का कारण पूछा। वे बोले- 'भगवन् ! हम सोच रहे है कि यह महिला कितनी महान् है कि अपने पापो की आलोचना सबके सामने खुले मन से कर रही है। ऐसी महानता हम मे कहाँ। हम तो अपने छोटे से छोटे पाप को छुपाने में लगे हैं। अपनी निन्दा में इतने भयभीत हैं कि अपने अपराध को गुरुचरणो में भी नहीं रख पाते है। सचमुच बहिन यशोदा मानवी नहीं देवी है।'

दो श्रावकों के मुँह से यह बात सुनकर सभी लोग अवाक् रह गए। तब आचार्यदेव ने फरमाया कि 'तुम सब ने निन्दा कि लेकिन सभी अपना-अपना दिल खोलकर देखो कि जिसने जो पाप का सेवन किया है, क्या वह दुनिया के सामने रख सकता है। किसी मे हिम्मत है। यदि नहीं तो आप सबसे ज्यादा पवित्रता इस यशोदा देवी की आत्मा में आ चुकी है, जिसने शुद्ध हृदय से अपनी आलोचना की है। इसका प्रमाण है कि इसकी काली साड़ी दो छोटे धब्बों को छोड़कर एकदम श्वेत हो गई है, देखो तुम सब।'

सभी को सफेद साड़ी देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। यह कैसा चमत्कार है ? यह साड़ी तो काली पहनकर आई थी। सफेद कैसे हो गई ? यही तो उसकी पवित्रता का सबूत है। तभी आचार्यदेव की वाणी गूंजी 'इसकी काली साड़ी पर दो धब्बे इसलिए रह गए कि इन दो श्रावकों ने इसकी निन्दा नहीं की। खैर इसका मन तो पवित्र हो ही गया है।' आचार्यदेव यशोदा की ओर उन्मुख होकर बोले- 'बहिन ! अब तुम्हारा प्रायश्चित्त इतना ही है कि अपने मुँह से मिच्छामि दुक्कडं बोलो।'

आचार्यदेव के कहे अनुसार यशोदा ने ज्योंही 'मिच्छामि दुक्कडं' बोला उसकी साड़ी के वे दो धब्बे भी मिट गए। जो उसकी सम्पूर्ण पवित्रता के सूचक बन गए।

यह सब देखकर जो जनता अभी तक निन्दा कर रही थी, वही अब जय-जयकार कर उठी। इस युग की सती यशोदा की जय हो। इस युग की महानारी यशोदा की जय हो। इस युग की भगवती यशोदा की जय हो। लोगो ने आचार्यदेव की जय के साथ यशोदा की जय-जयकार से आकाश को गूंजा दिया।

आचार्यदेव ने उसके अपराध का प्रायश्चित्त इस प्रकार दिया। बहिन यशोदा अपनी पवित्रता की उद्घोषणा के साथ ही उसी वक्त गृहस्थ वेश का परित्याग करके 'खेतो देतो निरारभो पकइयं अणगारियं' शान्त दान्त निरारंभी साध्वी के रूप मे दीक्षित हो गई। अब तो सती ही नही, महासती यशोदा की जय-जयकार हो उठी।

प्रायश्चित्त होने के अनेक रूप होते है। उसमें आत्मशुद्धि का एक रूप भी था। जो व्यक्ति सबके सामने अपने अपराधो की आलोचना नही कर सकता है, तो वह एकान्त मे गुरुचरणो मे करे। बिना पापो की आलोचना किये आत्मशुद्धि नही हो सकती।

यशोदा साध्वी बनकर दृढ़ता से महाव्रतो का अनुपालन करती हुई स्वर्गलोक को प्राप्त हुई।

□□□

55. सूअर का बच्चा

एक राजकुमारी महल के झरोखे से बैठी राजपथ का दृश्य देख रही थी। उसी समय मे उसने एक सुअरणी को अपने छोटे-छोटे बच्चो के साथ देखा। राजकुमारी को वे छोटे बच्चे बहुत अच्छे लग रहे थे। अपनी दासी से कहा- 'तुम एक बच्चे को ऊपर ले आओ।' दासी ने सोचा- 'राजकुमारी के मन मे आज क्या आयी है। गदगी के खाने वाले सुअर के बच्चे को क्यो मंगा रही है।' पर मालिक के सामने कैसे बोले ? जैसा मालिक का आदेश है, वैसा ही मुझे करना है। मै तो पैसे की नौकर हूॅ।

वह बिना कुछ बोले तुरन्त नीचे गई और सुअर के एक बच्चे को उठा लाई। राजकुमारी के सामने रखा। राजकुमारी ने कहा- 'पहले इसे साफ करो, फिर सोने की जजीर से बाध दो।' दासी ने वैसा ही किया और उस बच्चे को राजकुमारी के हाथो मे दे दिया। राजकुमारी उस सुअर के बच्चे को खिलाती हुई बड़ी खुश हो रही थी। छोटा बच्चा चाहे दुश्मन का भी हो तो भी प्यारा लगता है। देखते ही गोद मे उठाने की इच्छा हो जाती है, क्योकि छोटे बच्चो मे राग-द्वेष की कल्पना नही होती है। वह सुअर का बच्चा भी राजकुमारी की गोद मे खेल रहा था। राजकुमारी को भी उसे गोद मे खिलाते हुए गौरव का अनुभव हो रहा था।

एक बार उसकी सहेली के यहॉ से जीमने का न्यौता आया। राजकुमारी ने कहा- 'इस बच्चे को भी साथ मे लेना है।' दासी ने सोने की जजीर पकड़कर उस बच्चे को भी साथ ले लिया। रास्ते मे जो भी देखते, सभी आपस मे हॅसते और बाते करते कि कोई खरगोश पालता है, कोई कुत्ते का बच्चा पालता है, किन्तु राजकुमारी को देखो, सुअर के बच्चे को पाला है। कोई कहता है कि सुअर के बच्चे की भी

किस्मत जगी है। वह भी राजमहलों में पल रहा है।

राजकुमारी सहेली के घर पहुँची और जीमने के लिए वहाँ उचित आसन पर बैठी। वह सुअर का बच्चा भी पास में ही खेल रहा है। तभी एक सहेली के बच्चे ने वहाँ विष्ठा कर दी। सभी जीमने वाली बहिने नाक सिकोड़ने लगी और कहने लगी- 'जल्दी साफ करो, जल्दी साफ करो।'

तभी एक करिश्मा हुआ। राजकुमारी की गोद में खेल रहा सुअर का बच्चा गोद में से तीव्रता के साथ नीचे उतरा और बच्चे के द्वारा की गई अशुचि को खा गया। राजकुमारी ऐसा देखकर शर्मिन्दा हो गई और दासी से कहा- 'इसकी सांकल जल्दी से खोलो और सड़क पर छोड़ दो।' दासी ने राजकुमारी की आज्ञानुसार सुअर के बच्चे को सड़क पर छोड़ दिया।

जिसकी जो आदत होती है, वह कभी भी नही छूटती। सुअर अपनी आदत को छोड़ नही सकता। यह शरीर गन्दगी से भरा हुआ है। इसे ऊपर से कितना भी साफ कर लो, किन्तु 4-5 घंटे मे पसीना, मैल आदि से भर जाता है। अतः असस्कारित शरीर को सस्कारित करने के बजाय मूलभुत शुद्ध आत्मा, जो कर्माधीन होकर अशुद्ध हो रही है, उसे शुद्ध किया जाये।

□□□

56. सात भव-असंख्यात भव

दो मित्र एक केवलज्ञानी प्रभु के पास पहुँचे और विधिवत् वन्दना करके पूछने लगे- 'भगवन् ! हमारे मोक्ष मे जाने मे अभी कितने भव बाकी हैं।' केवलज्ञानी ने एक को कहा- 'तुम्हारे सात भव बाकी है', दूसरे से कहा- 'तुम्हारे असंख्यात भव बाकी है।' पहला सात भव की बात सुनकर खुश हुआ। दूसरा असंख्यात भव को सुनकर गभीर बना रहा। पहले ने धर्मध्यान करना सब छोड़ दिया। सोचा अभी 6 भव मे तो मोक्ष मिलनी ही नहीं है। यहाँ तक कि पापाचार का सेवन भी करने लगा। वह यहाँ से मरकर सातवी नरक मे गाया। नरक की स्थिति तैंतीस सागरोपम की होती है अर्थात् लम्बे समय तक नरक में रहेगा।

दूसरा मित्र असंख्यात भव के डर से बहुत धर्मध्यान करने लगा। अन्तिम